संजीव के उपन्यास साहित्य में आदिवासी नारी

MINOR RESEARCH PROJECT

FINAL WORK DONE REPORT

(FROM20/05/2014 TO 19 / 05 /2016)

SUBMITTED TO

ज्ञान-विज्ञान विमुक्तये

UNIVERSITY GRANTS COMMISSION

WESTERN REGIONAL OFFICE

PUNE – 411007

BY

DR. SUBRAO NAMDEO JADHAV

DEPARTMENT OF HINDI
SHRI SHIVAJI MAHAVIDYALAYA, BARSHI - 413411
DISTRICT-SOLAPUR.(M.S.)
2020

अनुक्रमणिका

प्रथम अध्याय : संजीव के उपन्यासों में आदिवासी नारी की जानकारी।

द्वितीय अध्याय : संजीव के उपन्यासों में आदिवासी नारी का स्थान।

तृतीय अध्याय : संजीव के उपन्यासों में नारी की आर्थिक, सामाजिक सांस्कृतिक, धार्मिक, परिस्थितियॉ।

चतुर्थ अध्याय : संजीव के उपन्यासों में नारी जीवन तथा आदिवासी समाज

उपसंहार :

प्रथम अध्याय

संजीव के उपन्यासों में आदिवासी नारी की जानकारी।

संजीव के उपन्यासों का कथ्य मौलिक ही नहीं वरन् अनेक संभावनाएँ लेकर अवरित होता है। वे कथ्य में नवीनता ही नहीं ढूँढते है तो उसकी व्यापक धरातल पर अभिव्यक्ति करते है। उनके उपन्यासों का कथ्य पिछडे अंचलों की त्रासदी, जनजातीय अभिशप्त जीवन, औद्योगिकरण के तहत होनेवाला विस्थापन, दलित चेतना, लोकजीवन और लोकसंस्कृति से जुडे विभिन्न संदभों को उजागर करता है।

संजीव के अब तक प्रकाशित किसनगढ के अहेरी (1984), 'सर्कस' (1984) सावधान! नीचे आग है' (1986), 'धार' (1990), 'पॉव तले की दूब' (1995), 'जंगल जहॉ शुरू होता है' (2000) और 'सूत्रधार' (2002) इन उपन्यासों के आधार पर इस परखा जा सकता है।

संजीव का प्रथम उपन्यास 'किसनगढ के अहेरी' लंबी कहानी का विस्तार है। यह उपन्यास किसनगढ़ के माध्यम से पिछडे अंचल में स्थित शोषण की भयावह व्यवस्था को प्रस्तुत करता है। इसमें निम्नवर्ग, उनका जीवन संघर्ष एवं पूंजीपतियों की काली करतूतों को समेटा है। शोषण के चहुमुखी चक्रव्यूह से निम्न वर्ग को अभिशप्त जिंदगी जीनी पन्ड़ती है। आजाद देश के नवअंग्रेज बुरी तरह से देशवासियों का खून एवं आजादी का रस चूसते हैं।

इसी कारण भगतसिंह की आवाज में यह उपन्यास प्रश्न करता है, ''आजादी किसके है।'' (पृ.125) अज्ञान, पिछड़ापन, ऋण मान्यता, धार्मिक आडंबर, आर्थिक विषमता, जाति भेद, नारी शोषण, बंधुआ प्रथा आदि के कारण यह अंचल कराह रहा है। जातीय समीकरण और शोषण के चलते यहॉ की प्रगति अवरूध्द हो गई है। ''हर जाति के नेता है, चौधरी है जिनकी दृष्टि इस खोल के बाहर एक बड़ी दुनिया तक जा नहीं पाती।'' (पृ.108) इसे चलते किसनगढ़ बाबा आदम के युग में जीता है। पुरानी शोषण और नई गुंड संस्कृति ने मिल– जुलकर मानो एक अजीब –सी विध्वंसात्मक नस्ल पैदा की है। आम आदमी मोहभंग के कारण घेतनाशून्य बन गया है। पिछडे अंचल के तमाम अभिशप्त संदर्भ इस उपन्यास में समेटे हैं।

औद्योगिकरण क्षेत्र तथा कोयला खदान में काम करनेवाले मेहनतकशों की जिंदगी तो दोजख के सामने है। उस पर भी इच्छा के विरूध्द, स्वच्छंद, जीवन से कटे, परिस्थितियों के थपेड़ो से इसमें धकेने आदिवासी तो बुरी तरह पीस रहे हैं। संजीव ने कोयला खदान में वास्तव्य के कारण इस पीड़ा को बड़ी शिद्दत से अनुभूत किया है। उनके कोयला अंचल पर लिखे उपन्यास इसका प्रमाण है। 'सावधान! नीचे आग है उपन्यास के केंद्र में बिहार के कोयला अंचल क्षेत्र की खदान है जो जलप्लावन की शिकार बन गई थी। इसमें खदान में काम करनेवाले मजदूरों का दयनीय जीवन, ठेकेदार – दलालों की कुटिलताएँ, शोषण तंत्र के नए रूप और व्यवस्थागत विसंगियों का यथार्थ चित्रण हुआ है। इस कोयला अंचल की धधकती आग लोगों को तिल तिल कर जलाती है। कड़ी मशक्कत के बावजूद सडी जिंदगी जीना उनकी नियति है। उपन्यास में जलप्लावन की घटना प्रमुख है। इसके तहत हजारों मजदूर खदान के अंदर कैद हो जाते हैं। तेरह मजदूर एअर पॉकेट में अटक जाते हैं और उन्नीस –इक्कीस दिन मौत से जुझाते हैं। इस बीच पूरा चंदनपूर अंदर –बाहर झुलसता है। खदान में अटका ऊधम भूख, भय और मृत्यू के तहत मजदूरों की दयनीय दशा का चित्रण अपनी डायरी में लिखता है। राहत कार्य का इंतजार करते करते अंदर फॅसे मजदूर बेमौत मर जातै हैं। ऊधम की डायरी से अनेक टूटती –लड़खड़ाती सॉसे, खून सने अत्याचार सामने आत हैं।

उपन्यास के पूर्वार्ध में कोयना खदान की अभिशप्त जिंदगी है तो उत्तरार्ध में जलप्लावन हादसा और व्यवस्था की अनदेखी। जॉच कमीशन की रिपोर्टअचरज में डालती है। इसी कारण उपन्यासकार लिखता है, ''सत्य गढ़ लिया गया। सत्य अस्पताल में पागल घोशित करके भर्ती कर दिया गया है। सत्य बराकर के श्मशान में प्रेत की तरह भटक रहा है। दामोदर के तट पर जल गया थोक भाव से सत्य।'' (पृ. 262) कोयला खदानों की अंदरूनी परतों को उद्घाटित करनेवाला यह अपने ढंग का एक अनोखा उपन्यास है।

'धार उपन्यास को 'सावधान! नीचे आग है' उपन्यास की अगली कड़ी कह सकते है। सावधान! नीचे आग है' उपन्यास एक साथ कई प्रश्न उपस्थित करता है जिसका उत्तर 'धार' में देखा जा सकता है। 'धार' का कथ्य विचार के माध्यम से

समाधान की ओर अग्रेषित होता है। इसमें कोयला अंचल के आदिवसियों की रचनात्मक संघर्ष गाथा को बुना है। उपन्यास के केंद्र में संथाल परगना का बॉसगडा अचल और संथाल आदिवासी हैं। इसके माध्यम से उपन्यासकार पूॅजीवादी व्यवस्था, शोषण तंत्र, माफियागिराहों का आंतक, राष्ट्रीय संपत्ति की लूट, मेहनतकश आदिवासियों की अभिशप्त जिंदगी और व्यवस्थागत विसंगतियों को उजागर करता है।

उपन्यास के पूर्वार्ध में कोयला अंचल का आदिवासी जीवन और पूंजीपति वर्ग द्वारा किया जानेवाला अमनानुष शोषण चित्रित हुआ है तो उत्तरार्ध में नई चेतना और संघर्ष की रचनात्मक पहल मिलती है। कथा के केंद्र में आदिवासी नारी मैना है जो अशिक्षित, आदिवासी होने पेर बावजूद सजग और विद्रोही है।

आदिवासी कड़ी मेहनत करते है लेकिन उन्हें न उचित मजदूरी मिलती है, न व दो जून की रोटी जुटा पाते हैं। इसी कारण मैना शोषण के खिलाफ आवाज उठाती है, ''हमारा अपना कोई पता –ठिकाणा नई काये पे हम रएता, फिर भी कंगाल? कब तब चलेगा ऐसा माफिक ...? (पृ.57) इससे मुक्ति हेतू मैना, अविनाश शर्मा तथा आदिवासी सहकारिता के परिप्रेक्ष्य में जनखदान का निर्माण करते हैं। जनखदान आशातील प्रगति करती है लेकिन व्यवस्था उसे खारिज करती है। परिस्थितियों के तहन उत्पन्न नई चेतना से विकसित यह कृति एक अलग ऊॅचाई को स्पर्श करती है।

'पॉव तले की दूब' एक लघु उपन्यास है। उपन्यास के केंद्र पंचपहाड क्षेत्र हे जहॉ झारखंड आंदोलन सुगबुगा उठा था। डोकरी ताप विद्युत संस्थान के मंच पर घटित होती है। उपन्यासकार इसके माध्यम से यह जताना चाहता है कि औद्योगिकरण किस प्रकार गॉव तथा आदिवासियों का विस्थापित कर रहा है। फिलिप इसी कसक को सभा के सामने अभिव्यक्त करता है, ''यह धरती, हमारी धरती सोना उगलती है और इस सोने की धरती की हम कंगाल संतान है।'' (हंस सितंबर 1990, पृ.76) अधिकारी और पूंजीपति न केवल आदिवासियों का शोषण करते हैं अपितु राष्ट्रीयता की लुट भी करते हैं। औद्योगीकरण की नीति और

राजनीतिक कुटिलता के चलते आदिवासी बुरी तरह छटपटाने हैं। उपन्यास का प्रधान पात्र सुदीप्त परिस्थितियों को बदलने की कोशिश करता है। वह बेहतर दुनिया का निर्माण करना चाहता है। उसके लिए प्रयास भी करता है लेकिन सहनशक्ति का अभाव व दबाव के चलते वह आत्महत्या कर देता है। सुदीप्त उपन्यास के केंद्र होने के बावजूद यह उसकी कथा नहीं। उपन्यासकार उसकी त्रासदी और विचारधारा का साधक –बाधक अन्वेषण करता है। वैसे यह लघु उपन्यास पने में तमाम संदभों को समेटता है लेकिन निश्चित दिशा में पहुॅचता नहीं।

संजीव कोयला अचंल के बाद 'जंगल जहॉ शुरू होता है' उपन्यास में जनजातीय जीवन के एक अलग संदर्भ का अन्वेषण करते है। इस उपन्रूास के केंद्र में बिहार का 'मिनी चंबल' से पहचाना जानेवाला पत्र चंपारण क्षेत्र है। इसमें थारू आदिवासियों की त्रासदी और डाकू समस्या का चित्रण है। डी.एस.पी. कुमार द्वारा चलाया 'ऑपरेशन ब्लैक पाइथॅन, उपन्यास का प्रमुख संदर्भ है। वह डाकुओं के उन्मूलन हेतू पत्र चंपारण के जंगल में प्रवेश करता है और इस जंगल के अंदरूनी संदर्भ उजागर होते हैं। हमलावार शक्ल की प्रकृति और डाकू– पुलिस की मुठभेड के चलते यह जंगल मानो युध्दक्षेत्र बन गया है।

मूलतः डाकू समस्या यहॉ आरोपित नही ंतो यहॉ के प्राकृतिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक परिवेश की उपज है। जाति, धर्म, पूंजीवादी व्यवस्था, शोषण, राजनीति, प्रकृति, डेवियेटेड संस्कार, जैसे कई कारक यहॉ व्यक्ति को डाकू बनानते हैं। परेमा, नोनिया, परशुराम, काली ,बिंदा, नरैना, जगन, नारायण श्यामदेव जैसे युवा विवशतावश डाकू बनते हैं। काली का पश्चाताप भी देखो कैसे धकेल दिल एग।'' (पृ.96–97) इससे मुक्ति चाहने के बावजूद उन्हें मुक्ति नहीं मिलती। उपन्यासकार ने इसके माध्यम से समाज में पनप रही जंगली व्यवस्था, सामाजिक विसंगितयॉ और विडंबनाओं को भी प्रस्तुत किया है।

जंगल तो माध्यम है इसके परिप्रेक्ष्य में व्यवस्था में पनपा जंगल सामने आता है। राजनीति इस जंगल को खाद डालती है। हर पार्टी का जंगल पार्टी से रिश्त है। मुरली पांडे जैसा शख्स इस देवभुमि को पवित्र रखने की अपनी ओर से पूरी

कोशिश करता हे। मौलिकता, व्यापक फलक, प्रतीकात्मकता, मानवीय सरोकार, समाजशास्त्रीय दृष्टि कथ्य के ठोस बिंदू है। इसमें डकेत समस्या का न केवल यथार्थ प्रस्तुतीकरण है तो उसके कारणों का गहराई से अन्वेषण मिलता है।

स्मकालीन उपन्यासों में परिवेश महत्वपूर्ण बन गया है। उपन्यास अब व्यक्ति की कथा नहीं कहत तो क्षेत्र, समसय और स्थितियों से साक्षात्कार कराते हैं। संजीव के उपन्यास भी इसी राह पर अग्रेषित होते हैन उनके उपन्यासों का भूगोल विशिष्ट हे लेकिन उनमें चित्रत संदर्भ व्यापक है। वे परिवेश को सूक्ष्मता से पकड़ते हैं' और उसके विविध आयाम प्रस्तुत करते हैं। उनके उपन्यासों में प्राकृतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक परिवेश यथार्थ रूप में मुखर हुआ है।

सावधान! नीचे आग है', धार और पॉव तले की दूब' उन्यासों में कोयल अंचल तथा औ़ोगिक क्षेत्र का परिवेश चित्रित हुआ है। सावधान! नीच आग है' उपन्यास में आ़द्योपंत एक नई दुनिया से गुजरने का पहसास होता है। जहॉ अक्सर डर, विपदा के काले बादल मंडराते हैं। परिवेश निर्मिति हेतु उपन्यासकार तकनीकी के विभिन्न संदर्भो का वर्णन प्रस्तुत करता है।

इस क्षेत्र में प्रवेश करने पर ऊधम सोचता है, ''आग की नदी दामोदर और धुऑसे का शहर झरिया! कुहासा नहीं धुऑसाकृ जहॉ – तहॉ रेल लाइनों के जाल, पंक्ति – पंक्ति खडी मालगाडियॉ, उच्छवास फेंकते स्टीम इंजन। डिब्बीनुना मकान और सर पर रह रहकर खौफनाक परिंदे –सी गुजरती रोप वे की डालियॉ।'' (पृ.10) काली धूल के बगूले, कोयले के अंबार, स्मषान से जलते कोयले, सिकुडी दुनिया आदि के कारण बीहडता और अवसाद की अनुभूति होती है।

उपन्यासकार कोयला अंचल की बाहरी दुनिया के साथ ही खदानों की अंदरूनी दुनिया का भी बारीकी से चित्रण करता है। इस क्षेत्र का परिवेश अपने –आप में जटिल और भयावह है। शायद इसी कारण चंदनपूर के बारे में विष्टू दा कहते हैं, ''चंदनपूर को समझना आसान नहीं– द मोस्ट माडर्न एंड द मोस्ट काम्प्लीकेटड। चंदनपूर एक पहेली है जिसे हर किसीकी खुद ही बुझना पडता है, यू नो?'' (पृ.16) जलप्रताप के बाद तो यह क्षेत्र स्मशान में तब्दील हो जाता है।

इसी प्रकार 'धार' उपन्यास में भी कोयला क्षेत्र, औद्योगिकरण, खदान, में काम करनेवाले आदिवासियों का जीवन, विस्थापन, खदान दुर्घटना, संथालों का सामाजिक – सांस्कृतिक जीवन आदि के माध्यम से सशक्त परिवेश की निर्मिति की है। 'पॉव तले की दूब' में पंचपहाड अर्थात बाघमुंडी, डोकरी, मेझिया इस झारखंड के खनिजबहुत क्षेत्र का चित्रण हुआ है। औद्योगीरण की चपेट से झुलसते गॉव, झारखंड मुक्ति आंदोलन और आदिवासी जीवन का इस उपन्यास में अंकन हुआ है। मेझिया तथा अन्य गॉवों की बदहाली देख – सुनकर सुदीप्त डर – सा महसुस करता है। ''लड़के –लडकियॉ और बुढे लकवा के मारे – से दीख रहे थे और उस पर उनके श्याह चेहरों की भयावनी उजली ऑखें। भरी दोपहरी मुझ पर प्रेतों और डायनों का साया मंडराने लगा।'' (हंस, सितंबर 1990, पृ.69) प्लांट के बनने से यहॉ की प्रकृति और जनजीवन कराहत नजर आता है।

'जंगल जहॉ शुरू होता है' उपन्यास बिहार केत्रपत्र चंपारण क्षेत्र की सुदंरता, रौद्रता, इतिहास, परंपरा, प्रकृति और संस्कृति को मूर्त करना है। जंगल के जटिल परिवेश ने यहॉ का जीवन संघर्षमय बनाया है। एक तरह से जंगल यहॉ सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक,राजनीतिक, सांस्कृतिक परिवेश का नियामक है। इस क्षेत्र के बारे में बैठाजी की टिप्पणी द्रष्टव्य है, ''उत्तर में नेपाल, पश्चिम में यू.पी., बीच में पहाड – जंगल और रेता के बीच की छिटकी आबादी और मीलों फैले गन्नों के खेत।'' (पृ. 232) यह जटिल जंगल अपराधियों की पनाहगाह है। राग, घृणा, हिंसा, प्रेम पर यह जंगल पल–पल रंग बदलता है। इस जंगल से थारू आदिवासियों का अटूट रिश्ता है।

जंगल ही इस उपन्यास का नायक है। पूरी कथा का नियामक। इस जंगल के परिप्रेक्ष्य में थारू आदिवासियों के जीवन के विभिन्न संदर्भ एवं डाकू समस्या को प्रस्तुत किया है। 'सुत्रधार' जीवनीपरक उपन्यास है। लेकिन यह केवल भिखारी ठाकुर की जीवनी नहीं है तो इसमें 'भिखारी यु' (1887–1971) मुर्त हुआ है। उपन्यासकार युगीन समाज, परंपरा, रस्म –रिवाज, अर्थव्यवस्था, जाति व्यवस्था, धार्मिक व्यवस्था, सांस्कृतिक परिवेश, अंतविरोध आदि के परिप्रेक्ष्य में भिखारी ठाकुर के चरित्र को उभारता है। परिवेश की सशक्तता के कारण ही भिखारी ठाकुर का

चरित्र विश्वसनीय बन गया है। इसमें तत्कालीन सामाजिक – सांस्कृतिक परिवेश अपनी खामियॉ और खूबियों के साथ अवतरित हुआ है।लोकमानसिकता में स्थित 'बिदेसिया' ही लोकप्रियता को उपन्यासकार ने सृजनात्मक रूप दिया है। लोकसाहित्य और भोजपूरी

'सवधान! नीचे आग है' और 'धार' में कोयला अंचल में मजदूरी करनेवाले आदिवासियों को तंगदस्त, अभावग्रस्त, फटेहाल जीवन सामने आता है तो 'पॉव तले की दूब' में झारखंड के खनिजबहुल मेझिया क्षेत्र हे आदिवसासियों का। मेझिया का संपन्न खनिज क्षेत्र पूंजीपति और अधिकारियों का लुट क्षेत्र बन गया है। इससे स्थानीय आदिवसियों का जीवन सुकर बनना तो दूर लेकिन दुभर बन गया है। कडी मशक्कत के बावजूद उन्हें दोन जून की रोटी तक नसीम नहीं होती। कपड़ों के नाम पर वे मटमैली धोती या चिथडे पहनते है। उनका स्वच्छंद एवं सुखी जीवन पूरी तरह बाधित हो गया है। अपनी ही भूमि से विवशतावश वे भाग रहे हैं। अभाव, आलंक और शोषण के चलते आदिवासी पूरी तरह पस्ते हैं। पूंजीपति ठेकेदार काम मूल्य में उनका श्रम खरीदते हैं तो पुलिस खानापूर्ति के रूप में उनका इस्तेमाल करती है.।

आदिवासी युवा पीढ़ी में इसके तहत आक्रोश मिलता है। 'पॉव तले की दूब' का फिलिप अपना आक्रोश व्यक्त करते हुए कहता है, ''प्रदेश की दो तिहाई आय हमसे होती है और हमारी हालत – न तन पर साबुन कपड़ा, न पेट भरपे भात। दवा –दारफ, पढाई लिखाई की बात छोड ही दीजिए। बहुत पैसा दिया सरकार ने। सरकार घोषणाएॅ करती नहीं थकती लेकिन हम कंगाल के कंगाल।'' (हंस सितंबर 190, पृ.76) 'धार– उपन्यास की मैना भी यही सवाल करती है।

विकास के नाम पर जनजातीयों के होनेवाले शोषण और विस्थापन का उपन्यासकार ने यथार्थ अंकन किया है। 'जंगल जहॉ शुरू होता है' उपन्यास में.प. चंपारण के थारू आदिवासियों का जीवन चित्रित हुआ हे। यह जाति एक साथ पूंजीपति पुलिस, डाकू और व्यवस्था के शोषण की शिकार है। उसका जीवन अत्यविधक जटिल और संघर्षमय है। पुलिस और डाकू की मुठभेड में निरापध थारू

पीसते हैं। बिसराम बहू द्वारा डाकूओं को खाना बनाकर देने पर डी एसत्रपीत्र कुमार उसे टोकता है तो वह कहती है, ''हम का करे साहेब, हमरा तो दूनों तरफ से मौवत है – न बना के देते तो ऊ लोग मारता , बनाके दिए तो आप लोग।'' (पृ.57) सजा के रूप में उसे बलात्कार सहना पड़ता है। प्रतिशोध की भावना से उसका देवकर काली डाकू जाता है। शानदार परंपरा के बावजूद यह जनजाति नारकीय जीवन जीने को विवश है। यह जाति अपने आप में स्वयं एक मिथक है। उपन्यासकार ने इस जाति की मानसिकता, अरण्यमुखी संस्कृति, विस्थापन और तमाम संदभों को प्रस्तुत किया है।

जनजातियों तो शोषण की सबसे ज्यादा शिकार होती है। कोयला अंचल में काम करनेवाले आदिवासियों का पूंजीपति, ठेकेदार, पुलिस व्यवस्था द्वारा अमानुष शोषण किया जाता है। 'धार' उपन्यास में इस शोषण का भयावह रूप सामने आता है। पूजीपति, ठेकेदार माफिया, दलाल, कारखानदार आदिवासियों के साथ जानवरों की तरह बर्ताव करते है।

खदानों में मेहनत आदिवासी करते हैं और संपन्न होते हैं पूंजीपति। व्यवस्था और पूंजीपतियों में मिलीभगत होने से कहीं सुनवाई भी नहीं। ''ठेकेदार ढोर – डांगरों की तरह उन्हें काम करने हॉककर ले जाते है और चूसकर छोड देते है, माफिया अब भी उनसे अमानुषिक श्रम कराते है' और जरा – जरासी बात पर पीटते हैं।'' (पृ. 129) मैना की मॉ और मैना महेंदर बाबू के शोषण का विरोध करती है तो महेंदर बाबू उनके परिवार और ओझा को अपने पक्ष में कर उन्हें यातनाएँ देते हैं।

'सावधान! नीचे आग है' उपन्यास में भी खदान में काम करनेवाले मजदूरों को न उचित मजदूरी मिलती है न ही प्राथमिक सुविधाएँ। पॉव तले की दूब उपन्यास में शोषण के चलते आदिवासी तंगदस्त और फटेहाल जीवन जीते हैं। 'जंगल जहॉ शुरू होता है' उपन्यास में सवर्ण, जमींदार, पुलिस, डाकू और नेता थारू आदिवासियों का अमानुष शोषण करते हैं। पुलिस और डाकुओं की मुठभेड में निरापराध थारफओं की हत्या की जाती है। आतंक, असुरक्षा और शोषण के कारण

थारू जाति आहत मिलती है। थारू मर्दो को जमींदार – ठेकेदारों की बेगारी करनी पडती है तो नारियॉ जमींदार, डाकू और पुलिस की वासना का शिकार बनती है। सोखाइन, जोगी जैसे दलाल थारू नारियों का जानवरों की तरह व्यापार करते हैं।

शोषण से आहत होकार काली सोचता है, ''क्या वह इन हरामखोरों की बेगार करने और उनकी गॉड धोने के लिए ही पैदा हुआ है? हतक, हतक और हतक! ळतक के सिवा कुछ नहीं। ऐसे अन्याय पर उसे क्या करना चाहिए – यह बतानेवाला कोई नहीं– कोई –देवता, न कोई साधु – फकीर, न कोई लीडर – अफसर! हर तरफ अंधेरा है, हर तरफ घुटन!'' (पृ.93) इसी शोषण से त्रस्त होकर काली विवश होकर डाकू बन जाता है। 'सुत्रधार' में तत्कालीन समाज में नाई जैसी छोटी जातियों का उच्च जातियों द्वारा सामाजिक शोषण किया जाता है। नाई जाति के होने से भिखारी ठाकूर को हर जगह प्रताड़ित किया जाता है। इससे उनके अंदर का कलाकार आहत होता है। वे यहॉ तक सोचते हैं, ''पिछले जनम में जरूर ऐसा बड़ा पाप किया होगा कि इस जनम में नाई के घर पैदा हुए।''(पृ.157)

'सावधान! नीचे आग है'' उपन्यास में चंदनपुर खदान क्षेत्र में स्थित शोषण के विरूध्द नई पीढी के ऊधम, आशीष, मेवा अपने ढंग से विरोध करते हैं। लेकिन ऊधम खदान में अटक जाता है और आशीष को ठगाया जाता है। आशीष घुऑता है लेकिन प्रज्वलित नहीं होता। रोजी –रोटी के चलत मजदूरों का प्रतिरोध भोथरा बन गया है। आशीष में दृढ इच्छाशक्ति का अभाव है। इसी कारण अतून दा उसे कहते हैं, ''गूंगी का मामला हो या कमीशन का – तुम में एक बार संकल्प जगा और हजार बार विकल्प। जब तुम इतने दृढ मनोबल के नहीं थे तो क्या जरूरत थी लड़ाई मोल लेने की?''(पृ.259) भेडिया तत्व आशीष की चेतना को कुचल देते हैं। 'पॉव तले की दूब' उपन्यास में भी चेतना का लगभग यही हश्र होता है।

सुदीप्त आदिवासियों की अस्मिता को स्वर देने की पहल करता है। वह आंदोलन के लिए प्रेरक भूमि तयार करना चाहता है। लेकिन स्वयं उसमें दृढ़ता और सहनशक्ति का अभाव है। वह स्वयं कहता है, ''मुझे स्वीकारने में शर्म नहीं कि मैं एक चरित्र ख़डा न कर सका। '' (हंस, सितंबर 1990, पृ.82) फस्ट्रेशन के चलते वह

आत्महत्या कर लेता हैं सुदीप्त जीवन और सहनशक्ति का अभाव है। वह स्वयं कहता है, ''मुझे स्वीकारने में शर्म नहीं कि मैं एक चरित्र खड़ा न कर सका।'' (हंस, सितंबर1990, पृ.82) फस्ट्रेशन के चलते वह आत्महत्या कर लेता है। सुदीप्त जीवन और रचनात्मक लड़ाई में असफल होता है।

छूसरी ओर 'धार' में चेतना का प्रगल्भ और संरचनात्मक रूप सामने आता है। यहॉ चेतना में विचार और क्रिया कां अनूठा संयोजन मिलता है। आदिवासियों द्वारा जनखदान का निर्माण एवं विकास इसीका द्योतक है। आदिवासी मैना में अकाटय साहस, गजब की चेतना और क्रांतिकारी क्रियाशक्ति मिलती है। वह एक साथ परिवार, विरादरी, पूंजीपति, गुंडें और व्यवस्था से जूझती है। इसमें अविनाश शर्मा उसे सहयोग है। मैना को तोड़ने के लिए अनेक कुटिलताएँ अपनाई जाती है लेकिन वह हार नहीं मानती। इसी कारण उसके बार में हैदर मामा कहते हैं, ''वो आग है, आग जिसे छुती है, भस्म कर देती है।'' (पृ.180) वह अपनी जाति का अस्तित्व बचाने के लिए स्वयं बलि पर चढ़ती है। एक तरह से वह मरकर भी अमर हो जाती है।

इसी प्रकार जंगल जहॉ शुरू होता है, उपन्यास के मुरली पांडे में अदम्य जिजीविषा झलकती है। डाकू उन्मूलन को लेकर उनके अपने उपाय हैं। वे स्थानीय ऊर्जा से समस्या को दूर करने में विश्वास रखते है। उनके द्वारा चलाया 'ग्राम सुरक्षा दल' भटक जाने पर भी वे हार नहीं मानते, 'सेवा सदन' का विकल्प सामने 'ग्राम सुरक्षा दल' भटक जाने पर भी वे हार नहीं मानते, 'सेवा सदन' भटक जाने पर भी वे हार नहीं मानते, 'सेवा सदन' का विकल्प सामने रखते हैं।

परशुराम डाकू जब उन्हें अपने पक्ष में करना चाहता है तो वे निर्भयता से कहते है, ''इस पूरे क्षेत्र में इजी मनी, इजी सेक्स, इजी सक्सेस यांनी पैसा, औरत और सफलता को आसानी से हासिल कर लेने की हवा के विरूध्द मैं लोगों को मरते दम तक खड़ा करने की कोशिश करता रहुॅगा।'' (पृ.273) मुरली पांडे डकेत उन्मूलन की अपेक्षा डकेत निर्मिति के कारणों का उन्मूलन आवश्यक मानते हैं। कुमार में चेतना है लेकिन वह भटक जाता है तो काली अवैध राह अपनाता है।

जनजातीय जीवन पर लिखे उपन्यासों में 'लोक' का व्यापक चित्रण मिलता है। 'सावधान! नीचे आग है', तथा पॉव तले की दूब' उपन्यासों में चित्रित अंचल औद्योगीकरण से प्रभावित होने के बावजूद वहॉ 'लोकक' विभिन्न रूपों में मौजूद है। 'सावधान। नीचे आग है' में रोजी – रोटी हेतू चंदनपूर खदान क्षेत्र में आए मजदूरों का एक बहुमुखी 'लोक' दिखाई देता है। इनमें एक मिश्रित, साझी लोकसंस्कृति के दर्शन होते हैं। उनके जेहन में अक्सर अपने देश का संदेश गॅूजता है। अपनी मिट्टी से बिछडे लोगों में एक गहरी कसक है। हिंदू, मुसलमान, ईसाई, सिख, आदिवासी, बंगाली, बिहारी आदि लोग यहॉ अनेक बिंदूओं पर साझी जीते हैं। छठ मैया पूजा, बिरहा पार्टी, मेला, दंगल आदि के समय उनमें उल्लस पाया जाता है। सभी अपने अलीत को भूलकर वर्तमान में जीने की कोशिश करते हैं। ऊधम यहॉ कि जिंदगी देखकर काका से कहता है, ''का, अब तुप भूल जाओ, मुढी, मछली, रवींद्र, संगीत और मैं भूल जाऊॅ सरसों का साग, मक्की की रोटी और पंजाबी धुनें। संघर्ष के चलते यहॉ लोकसंस्कृति टूटती –बिखरती नजर आती है। इसकी तुलना में 'धार' के कोयलांचल में लोकसंस्कृति का व्यापक रूप मौजूद है। उपन्यास में संथाल आदिवासियों की मानसिकता, रहन–सहन, खान–पान, देवी–देवता, संस्कार, पूजा, रस्म, रिवाज, परंपरा, पर्व त्यौहार, पंचायत, जादू –टोना, बलि प्रथा, तंत्र –मंत्र जैसे विभिन्न संदर्भो का अंकन मिलता है।

उपन्यास में बधना, सरहूल, करमा, लोकगीत, लोकनृत्य आदि के माध्यम से संथाल आदिवासियों की संस्कृति उभरी है। इनकी संस्कृति निःसंदेह अपने में अलग और विशेष है। इसी कारण शर्मा मंगर से कहत हैं, ''आदिवासी औरतें सर पर एक गमछा रख लेंगी जो पीठ के नीचे तक फैला होगा, चाहे वे कायेला ही क्यों न ढो रही हो। जबकि दूसरी 'देशवाली' औरतों में ये चीज आपको नहीं मिलेगी।

आदिवासी संस्कृति तो इस मायने में आर्य संस्कृति से बेहतर थी, भले ही वे सॉवले और आर्य गौरे।''(पृ.39) संथालों में धर्म के आधार पर बनी जाति पंचायत का शोषण रूप भी चित्रित हुआ है। 'पॉव तले की दूब' उपन्यास में लोकसंस्कृति के संदर्भ उपन्यास को नया तेवर देते हैं। इसमें लोकगीत चेतना के वाहक रूप में प्रयुक्त हुए हैं। 'बजल बटकुच कथा' संथाली कौम के साहज और लोकसंगीत की

सामर्थ्य को उजागर करती है। माझी हडाम द्वारा बताई लोकमानस में स्थित 'चीनी बूढों की कथा' आदिवासी अस्मिता और त्रासदी की प्रतीक हैं।

'जंगल शुरू होता हैं', उपन्यास में थारू आदिवासियों की संपन्न लोकसंस्कृति की विरासत विस्तार से चित्रण किया है। गोरखनाथ, भर्तुहरि, राजा जनक आदि संदर्भ इस देवभूमि के अतीत को सामने रखते है। थारूओं की मानसिकता, आस्था, विसरासत, धर्मभीरूता, प्राकृतिक साहचर्य विश्वास, परंपरा, देवी –देवता, लोकगीत, लोककथा, मेला, रस्म –रिवाज आदि का उपन्या समें विपुल चित्रण मिलता है। थारूओं का अतीत और वर्तमान उपन्यासकार ने संपूर्णता से उजागर किया है। संजीव जनजातियों में स्थित शौर्य का संधान करते हैं। इस संस्कृति में अनेक मूल्यधर्मी संदर्भ मिलते हैं।

निष्कर्ष

विवेच्य कथा –साहित्य में संथाल, थारू, उरॉव, हो, मुंडा, गुलगुलिया, बोंडा आदि आदिवासी जातियों का सामाजिक यथार्थ परिलक्षित होता है। आदिवासी का जीवन गरीबी तथा आर्थिक अभावों में रोजी –रोटी की चिंता में बितता है। विवेच्य कथा साहित्य में संथाल आदिवासी और थारू आदिवासी का चित्रण अधिक मात्रा में हुआ है। आदिवासी समाज अज्ञानी, अनपढ़ अंधश्रध्दालू तथा कुप्रथाओं में उलझा हुआ है।

आदिवासी समाज अनेक वर्षो से जंगल और वनों में रहकर जीविकोपार्जन करता है। आदिवासियों की कुछ जातियॉ शहरों के संपर्क में आने के कारण खदानों में, कारखानों में मजदूरी करती है। संजीव ने कारखाना मालिक, खदान मालिक, भ्रष्ट अधिकारियों, ठेकेदारों, भ्रष्ट पुलिस, सूदखोर दलाल, मुखिया, डाकू द्वारा आदिवासियों के अमानुषित दोहन के प्रति विद्रोह प्रकट किया है। पूँजीपति, ठेकेदार, भ्रष्ट अधिकारी और पुलिस द्वारा आदिवासियों के सर्वाधिक शोषण का यथार्थ अंकन किया है।

'आदिवासी' 'मूल निवासी'किसी देश या प्रांत के वे निवासी जो बहुत पहले से वहॉ रहते आए हो', और 'जिनके बाद और लोग भी वहॉ आकर बसे ही' किंतु

इनका 'किसी क्षेत्र के मूल निवासी' अर्थ लेना अधिक ठीक लगता है। 'आदिवासी' की प्राप्त परिभाषाओं का अध्ययन करने के पश्चात् इसकी तर्कसंगत परिभाषा इस प्रकार दी जा सकती है – ''ऐसा समूह जो एक सामान्य भू– भाग पर निवास करता है, वहॉ भी वह अपना पृथक, अस्तित्व बनाए हुए जिसके सदस्य एक बोली बोलते हैं, वे आदिवासी हैं।''

आदिवासी समाज घने जंगलों में, पहाड़ियों में तथा वनों में निवास करता है। संजीव ने ऐसे दुर्गम इलाकों में जाकर उनके सामाजिक यथार्थ के विभिन्न रूपों को उजागर किया है। जैसे –उनकी जाति पंचायत, पारिवारिक जीवन, पितृसत्ताक प्रणाली का यथार्थ अंकन आदि। आदिवासी समाज की सामाजिक स्थिति दयनीय है। आदिवासी संस्कृति उनकी अस्मिता रूढ़िवादियों के कारण तार –तार हो रही है। उनके अज्ञान तथा अंधश्रध्दालू वृत्ति का लाभ धर्म के पंडित लेते है और उन्हें कंगाल बनाते है। संजीव ऐसे ढोंगी, ओझाओं (पंडितों) का प्रतिरोध तथा उनके प्रस्ताव को ठुकराने का आह्‌वान करते है। भ्रष्ट पुलिस व्यवस्था की अमानुषिकता के प्रति वे आघात करते है।

विवेच्य कथा – साहित्य में धर्म तथा धर्म से उत्पन्न कर्मकांड से निर्मित अंधविश्वासों, डायन जैसी बर्बर कुप्रथा का तथा अद्‌भूत लोकाचार का यथार्थ, अंकन दृष्टिगोचर होता है। विवेच्य कथा –साहित्य में आदिवासी समाज के अर्थाभाव की समस्या का यथार्थ चित्रण किया है।

आदिवासी अनपढ़ अंधश्रध्दालू तथा उत्सवप्रिय होने के कारण रहन –सहन, भुखमरी, बेकारी तथा विस्थापित आदि अनेक समस्याओं से जूझता हुआ परिलक्षित होता है। संजीव ने आदिवासी समाज को आर्थिक बदहाली को करूणाभरी निगाहों से आंका है। सभी ओर से शोषण के जाल में फॅसे अभावग्रस्तता में छटपटाते आदिवासी समाज के प्रति उन्होंने गहरी सहानुभूति प्रकट की है।

संस्कृति तथा धार्मिक रीति – रिवाजों का पर्याप्त चित्रण संजीव ने किया है जिसमें लोककथा, बजलबटकुच कथा, जनीशिकार, विवाह संस्कार, मुंडन संस्कार, मेला, लोकगीत, जागरगीत प्रेमगीत और पारंपरित गीत आदि। विवेच्य कथा –

साहित्य में चित्रित नारी पूँजीपतियों का शिकार अवश्य हुई है लेकिन वह पूँजीपतियों, धर्मगुरू तथा व्यवस्था के खिलाफ प्रतिरोध करने वाली दृष्टिगोचर होती है।

संदर्भ

1) सं. रामचंद्र वर्मा– मानक हिंदी कोश, पहला खंड, पृष्ठ 264

2) राजीवलोचन शर्मा – भारत के जनजातियॉ, पृष्ठ 90

3) संजीव – महामारी, पृष्ठ 26. 27

4) किसनगढ के अहेरी – संजीव

5) पॉव तले की दूब– संजीव

6) 'सावधान! नीचे आग है' – संजीव

7) कथाकार संजीव – गिरीश काशिद

8) सामाजिक यथार्थ और कथाकार संजीव – डॉ. शहाजहान मणेर

9) 'जंगल जहॉ शुरू होता है– संजीव

10) सर्कस – संजीव

11) 'धार – संजीव

12) संत्र श्री नवल जी – नालन्दा विशाल शब्दसागर, पृष्ठ 1135

13) अनूप शुक्ल – आकांक्ष और यथार्थ, पृष्ठ 33

14) डॉ. त्रिभूजन सिंह – हिंदी उपन्यास और यथार्थवाद पृष्ठ 44

द्वितीय अध्याय

संजीव के उपन्यासों में आदिवासी नारी का स्थान

हिंदी कथा – साहित्य की वर्तमान पीढ़ी में जिन रचनाकारों ने अपना महत्त्वपूर्ण स्थान बना लिया है, उनमें संजीव का नाम विशेष उल्लेखनीय है। उन्होंने अपने कथा – साहित्य में प्रधान विषय के रूप में दलित, आदिवासी तथा निम्नवर्ग को केंद्र में रखा है। उनकी दृष्टि शोषित, पीड़ित, दलित समाज पर टीकी हुई दृष्टिगोचर होती है। उने अभी तक सात उपन्यास तथा ग्यारह कहानी संग्रह हैं। इन कहानियों में से छब्बीस लंबी कहानियॉ हैं। उन्होंने उपन्यासों में जनधर्मिता का परिचय दिया है।

संजीव के कथा – साहित्य में विषय की दृष्टि से विविधता है। संजीव ने अपने कथा–साहित्य में नये और अनछूए विषयों को प्रस्तुत किया है। सन 1998 में रानीगंज में 'संजीव लोक –समान' में राजेंद्र यादव ने संजीव के साहित्य में विविधता को देखकर कहा था, ''हिंदी कथा – साहित्य में प्रेमचंद, यशपाल के बाद संजीव ही तीसरे लेखक हैं, जिनका लेखन संसार विविधताओं से परिपूर्ण है, इतनी विविधता रेणु में भी नहीं है।''[1] प्रस्तुत कथन में अतिशयोक्ति नहीं है क्योंकि संजीव के कथा – साहित्य का विषय फलक व्यापक है। इनके चार उपन्यास आदिवासी जीवन पर केंद्रित हैं तथा एक उपन्यास दलित जीवन पर है। संजीव क`अब तक जितने उपन्यस प्रकाशित हैं उनका वसतुपरक विवेचन यहॉ प्रस्तुत हैः

किसनगढ़ के अहेरी प्रकाशन क्रम के अनुसार संजीव का यह पहला उपन्यास है। इसका प्रकाशन मीनाक्षी पुस्तक मंदिर, दिल्ली से सन 1981 में हुआ। इस उपन्यास में अवध के किसनगढ़ गॉव का आजादी के बद के सामंती रूप का चित्रण प्रस्तुत किया गया है। इसमें किसनगढ़ के दो वर्गो का चित्रण हुआ हैं जिसमें एक संपन्न और सत्तावालों का, तो दूसरा विपन्न और शोषितों का। स्वयं की उच्चवर्ग के माननेवाले ज्योतिषबाबा, कलिकापंडित, ब्रम्हचारीबाबा, चैतूबाबा जैसे ढोंगी साधू –संन्यासियों द्वारा पाप –पुण्य तथा अंधविश्वास की आड़ में निम्नवर्ग की

नारियों का यौन –शोषण हुआ दिखाई देता है। दूसरी और इनतपतिसिंह, इकबालसिंह, रूपई और उदयभान तिवारी आदि उच्चवर्ग के लोक वर्ग–व्यवस्था, जातिवाद तथा सामंतिवृत्ति के कारण सामान्य गरीब जनता पर अत्याचार करते हैं।

संजीव ने इस उपन्यास में उच्चवर्णीय समाज की ढोंगी परंपरा तथा धार्मिक आडंबरता का पर्दाफाश किया है। ब्रम्हाचारी की भानजी राधा विधवा होने पर उसका धर्म आडंबर के नामे पर मुंडन करना तथा मामा द्वारा राधाा पर बलात्कार करना धार्मिक आडंबर वृत्ति का द्योतक है। विधवा राधा अपनो तथा परायों के शोषण से तंग आकार गोमंती में जान देती है। यहॉ संजीव ने विधवा की स्थिति तथा उच्चवर्णियों की मानसिकता का पर्दापफाश किया है। किसनगढ़ के ठाकुर और जामींदार ढोंगी परंपरा में जीत है। ''बिट्यामाने अहेर और बड़कवा माने अहेरी''[2] इसलिए ठाकुरवंश की मान–मर्यादा को बचाने के लिए उदरेजसिंह के यहॉ लड़कियॉ बाहर उनके घर आती है। उनके घर से बाहर नहीं जाती। लड़कियॉ जन्म लेते ही इसलिए मार डाली जाती है कि उनके चलत कहीं सर झुकाना न पड़े। संजीव ने इस उपन्यास में वर्ण–विद्वेष और वर्ग वैषम्य, धर्म और वर्ण के सहारे टीकी राजनीति के वर्ग चरित्र को उद्घाटित किया है।

गॉव की नई पीढ़ी के रूप में ज्योतिषबाबा का बेटा जय किसनगढ़ के निम्नवर्ग का प्रतिपक्ष बनकर गॉव के अहेरियों के विरूध्द सैध्दांतिक संघर्ष करता है। साथ ही अपने पिता के अभिजात दर्प पर विजातीय चॉदनी से विवाह करके बाप के खिलाफ वर्ण– विद्वेष और वर्ग वैषम्य का प्रतिरोध करता है तब ज्योतिष बाबा तथा अन्य लोगों द्वारा पुलिस की सहायता से साजिश कर जय की हत्या और चॉदनी पर सामुहिक बलात्कार करत है। जय की अधुरी लड़ाई और संघर्ष को आगे बढ़ाने की सूचना के साथ उपन्यास का अंत होता है। विवेच्य उपन्यास में संकेत दिया गया है कि निम्नवर्ग के लोक स्वयं पर होने वाले अन्याय एवं अत्याचार के खिलाफ संगठित होकर क्रांति कर सकते है।

इस उपन्यास में अवधी भाषा का प्रयोग परिलक्षित होता है। मुख्य कथा में गतिशीलता लाने के लिए अनेक गौण कथाएॅ संयोजित की है। जैसे राजा की कथा,

सोना की कथा, मटरू की कथा, रूपई की कथा, रतिया की कथा, झिानकू गड़रिया की कथा आदि। उपन्यास में नाटकीय घटनाओं के चित्रण से तथा पात्रों का अतिरंजित प्रभाव कृतिम और अविश्वसनीय परिलक्षित होता है। उपन्यास का भू–भाग अवध का किसनगढ़ गोमंती का तट, तथा मकदुपर है। उपन्यास का शीर्षक सटिक एवं व्यंग्यपूर्ण है।

अतः स्पष्ट है कि यह उपन्यास सामंती रोब, जाति– व्यवस्था तथा धर्म और वर्ण के सहारे टीकी राजनीति की पोल खोलता है जो आज भी प्रासंगिक है।

'सर्कस' प्रकाशन क्रम के अनुसार संजीव का दूसरा और सफल उपन्यास है। इसका प्रकाशन सन 1984 में राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली से हुआ है। इस उपन्यास के बारे में डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ का कथन द्रष्टव्य है –'' किसनगढ़ के अहेरी' में संजीव ने जिस जनधर्मिता का परिचय दिया था, वह 'सर्कस' में भी समूची प्रमाणिकता के साथ व्यक्त हुई है। चूँकि पहली बार हिंदी उपन्यास में सर्कस से जुड़े व्यक्तियों का अंतरंग संसार उद्घाटित हुआ है, इसलिए 'विषय' की दृष्टि से भी यह उपन्यास नयी दिशा खोलने वाला है।'' इस उपन्यास का आरंभ वस्तुतः अंत से होता है। यह उपन्यास पूर्वदीप्ति शैली में लिखा गया है। 'झरना' उर्फ कामिनी की जीवन कहानी को उपन्यास के केंद्र में रखा गया है। 'झरना' की मॉ मर चुकी है और पिता रामूदादा सर्कस में मामूली काम करते हैं। झरना पिता के साथ रहने की जिद पकड़कर सर्कस में रह जाती है। इस तहर पिता की इच्छा न होते हुए भी वह सर्कस का जीवन जीने लगती है।

'सर्कस' मालिक नियोगी, सैंड, आदि सर्कस में आने वाली लड़कियों का मानसिक और लौंगिक उत्पीड़न करते हैं। इन कलाकारों को बंधुआ मजदूर की तरह मालिकों की मर्जी से जीवन बीताना पड़ता है। 'झरना' का नाम हर सर्कस मालिक अपनी इच्छा और रूचि से बदल देता है। 'झारना', गीता, सुजाता और कामिनी बनकर सर्कस में अपनी कला का हुनर दिखाती है। झरना 'सर्कस' में होने वाले शोषण तथा अत्याचार के खिलाफ प्रतिरोध करती है। विवेच्य उपन्यास में झरना के बचपन से लेकर विकास की पत्नी बनने और अंत में उससे अलग हो

जाने तक के जीवन में घटते अच्छे –बुरे प्रसंगों का अंकन हुआ है। विवेच्य उपन्यास में 'सर्कस' के कलाकारों की समस्याओं को व्यापक रूप में चित्रित किया गया है। 'जन्म– जन्मांतर की कथा' पढ़ने वाले वासुदेव झा कहते हैं– ''सर्कस में आदमी को जानवर और जानकर को आदमी की तरह ट्रीट किया जाता है।''[4] उपन्यास में बौनों, हिजड़ों और जोकरों की उपेक्षित, अपमानित जिंदगी तथा उनकी मानसिकता पर प्रकाश डाला है। विवेच्य उपन्यास के माध्यम से निम्नवर्गीय समजा के आर्थिक, शारीरिक और भावात्मक शोषण का यथार्थ चित्रण किया है।

प्रस्तुत उपन्यास में 'सर्कस' को व्यावसायिक कठिनाइयों तथा प्राकृतिक विपदा का सामना करना पड़ता है, जैसे बाढ़,बारिश, भूचाल, अग्निकांड, तूफान, युध्द आदि। प्राकृतिक विपदा के कारण सर्कस में काम करनेवाले कलाकारों, मज़दूरों को खाने और रहने के लिए मिलता नहीं है। विवेच्य उपन्यास की भाषा पात्रों के अनुकूल तथा आम पाठकीय समझ के अनुरूप है। सर्कस के कलाकारों की भाषा में मिश्रित बोलचाल का रूप परिलक्षित होती है। कथा में गतिशीलता लाने के लिए लेखक ने अनेक छोट– छोटे पात्रों का निर्माण किया है। जैसे जेनी, चन्द्रा, नासिरा, सुगिया, प्रसाद बाबू, रीता, सुरज बौना, सन्धु, तिवारी, जैनुल आदि।

विवेच्य उपन्यास लेखन का उद्देश्य निम्न वर्ग को संगठित होकर लड़ने की प्रेरणा देना है। उपन्यास के आखिर में संधूदी, कामिनी आदि का सक्रिय हो उठना याने सर्वहारा को संगठित होने की जरूरत तथा उच्च वर्ग के गुलाम बनकर न रहे इस बात को स्पष्ट करता है। अंततः स्पष्ट है कि इस उपन्यास में सर्कस में काम करनेवाला कलाकार एवं मजदूरों के आर्थिक, शारीरिक और भावात्मक शोषण का यथार्थ अंकन परिलक्षित होता है। पहली बार हिंदी साहित्य में सर्कस से जुड़े व्यक्तियों को अंतरंग उद्घाटित हुआ है।

सावधान! नीचे आग है' प्रकाशन क्रम के अनुसार संजीव का तीसरा उपन्यास है। इसका प्रकाशन सन 1986 में राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली से हुआ है। विवेच्य उपन्यास दो खंडों में विभाजित है। प्रथम खंड 'सतह के नीचे' है। द्वितीय खंड

'सतह के ऊपर' है। यह संजीव का डायरी शैली में लिखा उपन्यास है। विवेच्य उपन्यास को विभिन्न उपशीर्षकों के तहत कथा को विभाजित कर लिखा गया है।

उपन्यास के प्रथम खंड 'सतह के नीचे' में झारखंड के धनबाद जिले में स्थित चंदनपूर गॉव के कोयला खदान का अंतर्गत दृश्य तथा कोयला खदान में काम करने वाले मजदुरों के जीवन का यथार्थ अंकन हुआ है। इस उपन्यास के प्रमुख पात्र ऊधमसिंह और आशीष नौकरी की तलाश में चंदनपूर में आकर कोयला खदान में अप्रेन्टिसशिप के रूप में अप्रेन्टिसशिप के रूप में काम करते है। इनके साथ ही बिहार, प.बंगाल, झारखंड से आए हुए मजदूर भी खदान में काम करते हैं। इन मज़दूरों को खदान के भीतर काम करते समय चालगिरजाने, मिथैन गैस, सैंड न्यूमोकोनियोसिस (धूलिकणों के चलते होने वाली फेफडे की बीमारी), कार्बन मोनोक्साइड, खदान में गैस के चलते आग, खदान का असुरक्षित क्षेत्र, पानी का जमाव होने से आदि से मजदूरों की **जिंदगी खतरों से गुजरती हैं।**

खदान के भीतर अनेक तल में मजदूर काम करते है। ऊपरी तल से पानी का रिसाव शुरू होता है, तब मजदूर मैनेजमेंट को सूचित करते है। स्वार्थी, धनलोलूप मैनेजमेंट, मजदूरों की शिकायतों को नजरअंदाज करती है। मैनजमेंट खदान के नियमों का पालन न करने से अचानक ऊपरी तल से वेगवती धारा से पानी खदान में भर जाता है। खदान के भीतर हजारों मजदूर अटक जाते हैं। उपन्यास का प्रमुख पात्र ऊधमसिंह में अटक जाता है। इक्कीस दिन तक खदान में डूब कर मरे हुए लोगों के परिजनों को इंतजार करना पड़ता है। विवेच्य उपन्यास में खदान के भीतर और बाहर खदान मालिक, सूदखोर, ठेकेदार, युनियन के गुंडें खदान मजदूरों का आर्थिक, शारीरिक एवं मानसिक शोषण करते हैं। मजदूर जब अपने हक के लिए लड़ते है तक मैनजमेंट उन्हें मारने के फिराक में लगी रहती है। खदान के वेन्टिलेशन अफसर विष्ट्र दा कहते हैं –'' असल में खदान चलाते है माफिया सरदार – चंदकिशोर सिंह, गजाधरसिंह, अनूपसिंह, रामजी तिवारी और बुझारथसिंह जैसे कंट्रैक्टर। इन्हीं की युनियन, इन्हीं के सूदखोर, इन्हीं के दारूखाने, इन्हीं की पुलिस और इन्हीं के प्रशासन। जायज – नाजायज सब इन्हीं का । मैनेजर, एजेंट तो इनकी इच्छा के गुलाम हैं। मजाल है, इनकी हुक्म –उदूली करके

आगे निकल जायें खदान के नीचे–बॉटम से टॉप गियर तक और सेक्योरिटी से लेकर सेक्रेटरियट और मंत्री तक सभी महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं पर इनके आदमी तैनात हैं।'' विवेच्य उपन्यास के प्रथम खं डमें कोयला – खदान के भीतर मजदूरों की जिंदगी असुरक्षित है तथा मैनेजमेंट द्वारा भी उनका शोषण होता है। साथ ही खदान की स्थिति और मजदूरों की मजबुरी तथा आर्थिक स्थिति का यथार्थ अंकन हुआ है।

उपन्यास के द्वितीय खंड 'सतह के ऊपर'में चंदनपुर कोयला खदान डुबने से मजदूरों के परिवारों की मानसिक स्थिति का, मैनेजमेंट तथा सरकार की भूमिका का यथार्थ अंकन हुआ है। खदान के भीतर ऊधमसिंह, विष्टू दा, मंगूत, हेमब्रम, कलीमुद्दीन, झानू, जोखू, सोमारू सूखन और दूखन आदि हजारों मजदूर खदान में डूब कर मर जाते हैं। उनकी पत्नियों तथा बच्चों का आक्रोश लोगों की अफवाहें, उध्दार कार्य में आने वाले विघ्न रेस्क्यु ऑपरेशन का काम आदि प्रसंगों का यथार्थ चित्रण हुआ हैं। खदान के भीतर कितने मजदूर मर गए इसका सही ऑकडा मैनेजमेंट बताता नहीं है। एटेंडेंस रजिस्टर में मजदूरों की कम संख्या दिखाई जाती है। सरकार द्वारा जॉच कमीशन नियुक्त होने पर मैनेजमेंट अपने बचाव के लिए तथा सबूतों को मिटाने के लिए सर्वेयर बाबू मणीचन्द्र तथा मुकुल को जान से मार डालती है। मैनेजमेंट अपने को बचाने के लिए जॉच कमीशन का मुॅह बंद कर देती है। मृत मजदूरों की मौत का मुआवजा प्राप्त करने के लिए भटकती हैं। भ्रश्ट व्यवस्था, भ्रष्ट खदान मैनेजमेंट, मृत मजदूरों के परिवारवालों को मुआवजा देने के नाम पर शोषण करती है। विवेच्य उपन्यास में ऊधमसिंह की दो उायरियॉ मिल जाती है जिन्हें एयर पॉकेट में मरने से पूर्व लिखी थी। जिसमें खदान की सारी घटनाओं का राजा लिखा हुआ मिलता है। प्रस्तुत उपन्यास का उद्देश्य :जिनके हाथ मे कानून और पावर है, सब चोर है। मेहनत और ईमानदारी की कोई कद्र नहीं है। तब मजदूरों को संगठित होकर उनके लीडर ईमानदारी से भ्रष्ट व्यवस्था का प्रतिरोध, संघर्ष करेंगे तो मजदूरों को जरूर न्याय मिलेगा। पूरे उपन्यास का भू–भाग झारखंड राज्य का चंदनपूर तथा चंदनपूर खदान है। इस उपन्यास में पश्चिम बंगाल का बध्दीमान जिले का, बरकर बॉध का, झारखंड तथा धनवाद के आप–पास के वातावरण का चित्रण मिलता है। प्रस्तुत उपन्यास में भोजपूरी, बंगाली, बिहारी

हिंदी तथा अंग्रेजी भाषा का प्रयोग परिलक्षित होता है। कुछ जगह भदेस – गॅवारू शैली का प्रयोग भी हुआ है।

'सावधान! नैचे आग है' इस शीर्षक की सार्थकतता इसी में है कि कोयला खदान के जमीन के नीचे धधकती आग, गैस, पानी तथा जहरील वायू, चाल गिरने से मजदूरों को सावधान। रहना चाहिए। संक्षेप में खदान में खदान मालिक भ्रष्ट मैनेजमेंट व्यवस्था, ठेकेदार, दलाल, सूदखोर ये सारे लोग आग से भयानक है। इन सबसे मजदूरों को सावधान किया गया है।

'धार' प्रकाशन के अनुसार संजीव का चौथा उपन्यास है। इसका प्रकाशन सन् 1990 में हुआ। यह उपन्यास राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित हुआ है। प्रस्तुत उपन्यास में झारखंड का बॉसगड़ा, संथाल परगना और छोटा नागपूर में कोयला अंचल की खदानों में काम करने वाले संथाल आदिवासी, गुलगुलिया, बाहुरी और मोची आदि श्रमजीवी लोगों की व्यथा तथा इन मजदूरों का कोयला माफियायों, ठेकेदारों, धर्मगुरू ओझा और पुलिस द्वारा किया जाने वाला शोषण का यथार्थ अंकन हुआ है। उपन्यास को नायिका संथाल आदिवासी नारी मैना है। उसी के परिप्रेक्ष्य में आदिवासी जीवन, संघर्ष और चेतना का यथार्थ अंकन हुआ है।

उपन्यास के पूर्वार्थ में आदिवासी जीवन और उच्चवर्ग द्वारा किया जाने वाला अमानुष शोषण चित्रित हुआ है जिसमें मैना का बाप टेंगर स्वयं को 'साधू' और धर्मात्मा समझकर अपनी जमीन ठेकेदार महेन्द्रबाबू को दान में देता है। महेन्द्रबाबू उस जमीन पर तेजाब की फैक्टरी शुरू करते है। तेजाब फैक्टरी के प्रदूषण से कूएँ तथा तालाव का पानी जहरीला बन जाता है। जमीन बंजर बन जाती है, संथाल आदिवासियों को पीने का पानी मिलता नहीं है। तब मैना अपने बाप टेंगर, पति फोकल तथा तेजाब फैक्टरी के मालिक महेन्द्रबाबू के खिलाफ संघर्ष करती है। संथाल आदिवासी हमेशा सिलतोडी, चोरी तथा भीख मॉगकर पेट भरते है। मैना द्वारा संघर्ष में संगठित होते है। तब फैक्टरी मालिक महेन्द्रबाबू जनगुरू ओझा को रिश्वत देवकर ओझा के द्वारा मैना को डायन घोषित करत है। आदिवासियों की यह

बर्बर कुप्रथा है जिसमें डायन घोषित करने पर उस औरत को पत्थर मार–मार कर जाने से मारा जाता है। मैना ओझा की गरदन पकड़कर कहती है। –''खा जाहिर थान का कसम! खा मारॉ बुरू का कसम!... कि तू घूस नहीं खाता है, सच बोल रआ है। अरे ओकरा में तो तोर चेहरा लॉक रहा है तो तू हो गया डाईन''[6] प्रस्तुत उपन्यास में मैना के रूप में एक दलित आदिवाासी नारी अपने पूरे स्वाभिमान और संघर्ष चेतना के साथ खदान मालिक, ठेकेदार तथा भ्रष्ट पुलिस का मुकाबला करती है।

उपन्यास के उत्तरार्थ में नई चेतना, अधिकार बोध और संघर्ष का अंकन हुआ है। मैना, अविनाश शर्मा और मोडल आदि आदिवासियों के सहयोग से सहकारिता के परिप्रेक्ष्य में जनखदान का निर्माण करते है। इस जनखदान निर्माण में भ्रष्ट व्यवस्था, पुलिस द्वारा रिश्वत के लिए विरोध किया जाता है। संगठन निष्ठा और कड़ी मेहनत से जनखदान राष्ट्र को समर्पित करने का निर्णय होता है। भ्रष्ट व्यवस्था जनखदान के साथ पर पूॅजीपति महेंदर बाबू की अवैध कोयला खदान का राष्ट्रीयकरण करती है।

इस उपन्यास में दलाल, पूॅजीपति तथा भ्रष्ट अधिकारियों की सॉठ –गॉठ से राष्ट्रीय संपत्ति की लुट करते है। विवेच्य उपन्यास में भ्रष्ट व्यवस्था का यथार्थ अंकन हुआ है। साथ ही आदिवासियों का सामाजिक यथार्थ दृष्टिगोचर होता है। गरीबी, भूखमरी, गंदगी, जाति पंचायत, डायन जैसी बर्बर कुप्रथा, व्यवसनाधीनता जादू –टोना, भूत–प्रेत, मंत्र–तंत्र तथा जनगुरू ओझा को भगवान के समान मानकर उसकी हर बात मानना आदि।

विवेच्य उपन्यास में मैना का चरित्र स्वाभिमान और संघर्ष चेतना से युक्त परिलक्षित होता है। मैना के चरित्र में दलित नारी की पीड़ा और मानवीय संवेदना पूरी तरह से उजागर हुई है। पूरे उपन्यास का भू–भाग झारखंड का संथाल परगना, बॉसगाडा तथा छोटा नागपूर का है। विवेच्य उपन्यास की भाषा में संथाल स्थानीय बोली तथा हिंदी का मिश्रित रू‍प परिलक्षित होता है। उपन्यास की भाषा कथ्य तथा पात्रानुकूल है। इस उपन्यास का शीर्षक 'धार' की सार्थकता इसी में है श्रमिक वर्ग

को पूँजीपतियों के शोषण के खिलाफ संघर्ष करने के लिए सतत सान से ताजा होती धार की जरूरत है। 'धार' शीर्षक का प्रतिकात्मक अर्थ है श्रमिक वर्ग संगठित होकर हमेशा अन्याय के खिलाफ लड़ता रहे। अतःस्पष्ट है कि इस 'धार' उपन्यास में आदिवासी जीवन तथा उनकी चेतना, अधिकार बोध और संघर्ष का अंकन हुआ है।

'पॉवतले की दूब' प्रकाशन क्रम की दृष्टि से संजीव का पॉचवॉ उपन्यास है। उन्यास का प्रकाशन प्रवीण प्रकाशन, नई दिल्ली द्वारा सन 1995 में हुआ है। उपन्यास में झारखंड के मेझिाया गॉव, बाघामुंडी आदिवासी परिवेश का यथार्थ अंकन हुआ है। उपन्यास में समीर, सुदीप्त, माधो हंसदा, सुखमय बाबू तथा शीला केरकट्टा आदि मुख्य पात्र है। मंगरी, कालीचरण किस्कू, पंडित, विजय फिलिम, माझी हड़ाम बाबा, गोपाल और काली आदि गौण पात्र है।

उपन्यास में बाघामुंडी, मेझिया गॉव के आदिवासियों का कंगाल जीवन, अंधविश्वास, कुपोषण, डायन जैसी बर्जर कुप्रथा तथा विस्थापन आदि समस्याओं का यथार्थ अंकन हुआ है। आदिवासियों पर महाजन, ठेकेदार, सरकारी कर्मचारी तथा पुलिस आदि अन्याय अत्याचार करते है इस भी स्पष्ट किया है। इस उपन्यास की कथा को सुदीप्त और उसका पत्रकार मित्र समीर प्रथम पुरूष शैली में व्यक्त करते हैं। याने एक ही कहानी को प्रथम पुरूष शैली में दो आदमी पूरी करते है।

इसं उपन्यास का प्रमुख पात्र सुदाम उर्फ सुदीप्त बी.ई. होकर डोकरी ताप विद्युत प्रतिष्ठान में नौकरी करता है। लेखन कार्य भी करता है। गैर आदिवासी होते हुए भी आदिवासियों की भलाई के लिए आदिवासियों में स्थित अंधश्रध्दा, डायन प्रथा दारू पीना, अरण्यमुखी संस्कृति तथा उत्सवधर्मिता में आदिवासी कंगाल होते है। सुदीप्त आदिवासियों की इन समस्याओं को लेकर समाज परिवर्तन तथा इन्हें जागृत करने का काम करता है। सदियों से उपेक्षित आदिवासी विस्थापन और असुरक्षा में जीते है। तब सुदीप्त आदिवासियों को अधिकार और इज्जत प्राप्त कर देने के लिए संघर्ष करता है। आदिवासियों के इलाके में प्लाट बन जाने से चिमनी से उड़ने वाली राख और गैसों से चलते जहरीली हवा से आदिवासी बीमारी से जूझते है।

सुदाम आदिवासियों के आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक सभी स्तरों पर विकास के लिए कोशिश करता है। उसे कुछ लोगों का रोष तथा व्यंग्य सहना पड़ता है। तो दूसरी ओर मंत्रालय से सुदीप्त को धमकी दी जाती है – श्रमिक असंतोष और अनुशासनहीनता में, उद्योगविरोधी मानकर आदिवासियों को उकसाने के आरेप में अनुशासनात्मक कार्यवाही की जाती है। सुदीप्त जिंदगीभर आदिवासियों के बीच रहकर सामाजिक परिवर्तन का काम करता है। लेकिन एक भी चरित्र खड़ा न कर सकने से कारखाने से इस्तीफा देकर मेझिया गॉव छोड़कर चला जाता है। अंत में खुदकुशी कर लेता है। सुदीप्त काव गॉव में न आने पर मेझिया गॉव वाले ढूँढने लगते है। उसे याद करते है। विवेच्य उपन्यास में गैरआदिवासी व्यक्ति द्वारा आदिवासियों में सामाजिक सुधार का तथा आदिवासियों के सामाजिक यथार्थ का अंकन हुआ है।

संजीव का 'जंगल जहॉ शुरू होता है' उपन्यास सन 2000 में राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली द्वारा प्रकाशित हुआ है। यह उपन्यास लिखने के लिए संजीव को बारह साल लगे। पर्याप्त अनुसंधान, धैर्य, समझ और संवेदनशीलता के साथ 'जंगल जहॉ शुरू होता है' को आकार दिया है। प्रस्तुत उपन्यास में पश्चिम चंपारण के समूचे जीवन को आत्मसात कर थारू जनजाति का यथार्थ, पुलिस, प्रशासन तथा नेता आदि का प्रज्ञातंत्र के नाम पर चलने वाले मखौल को पूरी मार्मिकता में उजागर किया गया है।

उपन्यास में पुलिस उपअधीक्षक कुमार, काली, बिसराम, मलारी, डाकू, परेमा, मुरली पांडे, मंत्री दुबे प्रमुख पात्र है। सिन्हा साहब, भंडारी, शर्मा, पांडेयजी, जायसवाल, जोगिया, लल्लनबाबू, चंद्रदीपसिंह नोनिया, लॅगड, सोखाइन, गोकुल, बिन्द्रा, शम्सूलखॉ, मुखबिर इस्लाम तथा पारबती आदि गौण पात्र है। उपन्यास के प्रमुख रूप के डाकू समस्या, पुलिस की बर्बरता, पुलिस नेता और डाकुओं की सॉठ गॉठ तथा थारू जनाति के शोषण का यथार्थ अंकन हुआ है।

उपन्यास के घटनाक्रम कुछ इस तरह से है– ऑपरेशन ब्लैक पॉइथन के संदर्भ में मिनी चंबल के नाम से पहचाने जाने वाले पश्चिम चंपारण में डाकू उन्मूलन

अभियान केचार क्षेत्रों में से एक का इंचार्ज पुलिस उप –अधीक्षक और उपन्यास का प्रमुख पात्र कुमार है जो ईमानदारी से डाकू समस्या का समाधान तथा डाकूओं को पकड़ने का काम करता है। उसका ब्राम्हण और एक कर्तव्यनिष्ठ अधिकारी होना उसकी परेशानी का कारण बन जाता है। डाकू गोकुल, परेमा, बिन्दा परशुराम तथा राम जतन नोनिया आदि को पकड़ने के लिए अभियान जारी रखता है। कुमार इस सिलसिले में जमींदार चंद्रदीपसिह, लल्लनबाबू राजगढ़ियाजी के यहॉ पूछताछ करता है। तो दूसरी ओर थारू आदिवासी डाकू, जमींदार और पुलिस तीनों के अत्याचारों के बीच पिसते हुए जीते है। मालिक इनका शोषण करते है। डाकू इन्हें हथियार और सहयोग प्राप्त करने के साधन के रूप में इस्तेमाल करते है, और पुलिस इन्हें डाकुओं से मिला हुआ समझकर इनकी खोज –खबर पाने के लिए इन पर अत्याचार करती है। बिसराम अपनी लड़की मर जाने पर विलाप करता है– ''हमार तोहर तरीका से मौवत लिखल बा, ऐ बेटी! थ्जमींदार से, डाकू से, देवता –पिता से भूत भवानी से, पुलिस लेखपाल से ... रहे कबन सुख देखल ऐ बेटी ई ई ई....! तहरा के बचा ई अभागा ... आ आ आ!''

पुलिस थारूओं की डाकुओं से मिला हुआ समझकर बिसराम, मलारी, पुलिस थारूओं को डाकुओं से मिला हुआ समझकर बिसराम, मलारी, श्यामदेव, नोनिया और जोगी की हत्या करती है। ऑपरेशन के नाम पर पुलिस पचासों फर्जी इनकाउंटर करती है। विवेच्य उपन्यास में पुलिस की बर्बरता का यथार्थ अंकन हुआ।

भ्रष्ट और दुश्चरित्र पुलिस, परस्पर ईर्ष्याभान रखते हुए, डाकुओं से मिलकर, राजनेताओं के दबाब में रहकर तथा जातिवाद का आधार लेकर कार्य करती है। तब डाकू विरोधी अभियान को सफलता कैसे मिल सकती है राजनेता डाकुओं की मदद करते है। डाकू परशुराम के सिर पर एक लाख रफपये का इनाम है। वह चुनाव जीतकर जनता का सेवक बन जाता है जबकि काली सामाजिक प्रतारणा के चलते डाकू बन जाता है।

भ्रष्ट पुलिस व्यवस्था में केवल कुमार ईमानदारी से डाकू अभियान का काम करता है तब मुख्यमंत्री बेतीया के लोगों के सामने डाकू ऑपरेशन इनचार्ज कुमार

का अपमान करते है। पब्लिक प्रोपर्टी को तोड़ा जा रहा है, जनता को बेवजह परेशान किया जा रहा है। इस पर मुख्यमंत्री कुमार को जनता से माफी मॉगने के लिए कहते है। कुमार माफी मॉगता नहीं है।

विवेच्य उपन्यास स्वार्थी नेता के असली रूप को उजागर करता है। थारूओं की अंधश्रध्दा, मंत्र –तंत्र, प्रकृति की मार, कुसंस्कार तथा दरिद्रता थारूओं को कंगाल बनाती है।

पूरे उपन्यास में उत्तर में पडोसी देश नेपाल, पश्चिम में पड़ोसी राज्य उत्तर प्रदेश, बीच में दुर्भेद्य जंगल पहाड़, मीलों फैले गन्ने फैले गन्ने के खेत, नारायणी नदी, गंगौती, वाल्मीकिपुर, मकरंदापुर, बेतिया का चित्रण मिलता है। इस उपन्यास के कथांवस्तु में पश्चिम चंपारण के प्राकृतिक सौंदर्य का, मानवीय परिवेश का, इतिहास, भूगोल और समाजशास्त्र की वैविध्यपूर्ण जानकारी मिलती है। उपन्या समें विवरणात्मक शैली के साथ संवादात्मक शैली का भी कुशलता से प्रयोग किया गया है। उपन्यास की भाषा में थारू बोली तथा भोजपुरी का मिश्रित रूप परिलक्षित होता हे। उपन्यास का मुख उद्देश्य है सामाजिक, राजनीतिक एवं जनतंत्र के हालात के हालात के परिणामों का तथा डाकू समस्या का समाधान बताना है। कथाकार प्रेमकुमार मणि बिहार की दारण दशा एवं दिशा पर केंद्रित 'उपन्यास' जंगल जहॉ शुरू होता है' के बारे में कहते हैं–''यह उपन्याय मुख्यतः दस्यु समस्या पर नहीं बल्कि सीधे जनतंत्र की समस्या पर केंद्रित है।''[8] संजीव की खासियत यही है कि कथा चाहे जिस ढंग की हो वे उसके माध्यम से सामाजिक यथार्थ को स्पष्ट करते है।

अतः स्पष्ट है कि 'जंगल जहॉ शुरू होता है' उपन्यास में धारू आदिवासियों की यातना, उत्पी उत्पीड़न, संस्कृति एवं सत्ता के पाखंडी स्वरूप का यथार्थ दृष्टिगोचर होता है।

संजीव का 'सुत्रधार' उपन्यास प्रकाशन क्रम के अनुसार सातवॉ उपन्यास है। यह उपन्यास सन 2003 में राधाकृष्ण प्रकाशन द्वारा प्रकाशित हुआ है। 'सुत्रधार' भोजपुरी के प्रसिध्द लोक कलाकार भिखारी ठाकुर के जीवन पर केंद्रित है। इस

उपन्यास के बारे में श्री भगवानसिंह कहते हैं – ''सुत्रधार एक व्यक्तित्व एवं जीवनपरक उपन्यास है जिसमें संजीव ने भोजपूरी क्षेत्र के मशहूर लोक – नर्तक, नायक, वादक, नाटककार, अभिनेता, मूलगैन आदि के पूँजीभूत रूप भिखारी ठाकुर की कला –यात्रा की किस्सागोई के सरस सहज प्रवाह में बुनावट की है। इस उपन्यास में छोटे – बड़े पात्रों एवं घटनाओं की भरमार है, लेकिन इन सबको संजीव किस्सागोई के ऐसे सॉचे में ढ़ालते है कि पूरा उपन्यास भिखारी ठाकूर की जीवन गाथा के साथ–साथ संघर्ष कथा बनकर पाठकर के मन–मस्तिष्क पर छा जाता है।''[9]

प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने निम्नजातीय लोक– कलाकार के सुख–दुख, संघर्ष, सम्मान और अपमान आदि जीवन की घटनाओं को क्रमशः कथा के सुत्र में पिरोते हुए क्रांतिकारी एंव सुधारक के रूप में अंकित किया है। पिखारी ठाकुर का जीवनक्रम इस प्रकार से है– भिखारी ठाकुर जाति से नाई होने के कारण परंपरागत न्यौतने और ठहलुआई का काम करता है। नौ साल की उम्र में पाठशाला में जाने पर वहॉ जातिवादिता और वर्णव्यवस्था मानने वाले सवर्ण बच्चों द्वारा अपमानित होता है। पाठशाला में ठगलोहार, भगवान साहू तथा रामानंदसिंह आदि से गाढ़ी दोस्ती हो जाती है। पाठशाला में जी न लगता देखकर भिखारी के बाप दलसिंगार ठाकुर भिखारी को चरवाही का काम सौंपते है। एक बार दलसिंगार ठाकुर भिखारी को एकौना में यज्ञ के लिए सेवा करने ले जाते है। यज्ञशाला भिखारी के गौर वर्ण, सुंदर व्यक्तित्व को देखकर पुरोहित उसे ब्राम्हण समझकर यज्ञशाला को रंगीन अक्षत से चौक पूरने का काम सौंपते है। तब एक ब्राम्हण भिखारी नाई जाति का होने से भिखारी का अपमान करता है और यज्ञशाला से बाहर जाने के लिए कहता है। इस प्रकार भिखारी ठाकुर को बचपन से जीने के स्तर पर जातिवाद ; वर्ण – व्यवसथा और गरीबी का सामना करना पड़ता है। चरवाही छुड़ाकर भिखारी हज्जामी काम करता है। हज्जामी करते–करते भिखारी का दिल राम लीया तथा नाटक खेलने में रम जाता है। अपने मित्र सोमारू, रामानंदसिंह, बाबूलाल, रामचन्नपंडित, जूठन ठाकुर आदि के सहयोग से 'बिरहा बाहर', 'कलजुग प्रेम', 'बेटी वियोग', 'पुत्र वध', 'बिदेसिया' आदि नाटक रंगमंच पर खेल के दिखाते है। इन नाटकों में अपने

ही आसपास के परिवार समाज, जाती–बिरादरी, रूढ़ियों, कुरीतियों, विषमताओं आदि समस्याओं को पेश करते है। 'बेटी वियोग' नाटक में गरीबी एवं कर्ज में डुबे मॉ –बाप अपनी बेटियों को पैसे वाले बूढ़ों को बेचते हैं। यह नाटक देखकर समाज में उथल –पुथल मच जाती है। इस नाटक की बज़ह से अनेक बेटियों ने बुढे वरों से शादी करने से इन्कार कर दिया, कितनी मंडप से भाग गई। 'बहरा बहार' में औरत के दर्द को दिखाया जिनके मर्द परदेष में जाकर इन्हें वियोग की ज्वाला में दग्ध होने को मज़बूर कर देते है। इस प्रकार भिखारी ठाकुर अनेक समस्यामूलक सामाजिक नाटक लिखकर समाज सुधार करते है। तब उच्च वर्ग के लोग कहते है– भिखारी समाज का नाश कर रहा है। लौंडेबाजी को बढावा दे रहा है आदि आरोप द्वारा भिखारी का बहिष्कार किया जाता है। इसके बावजूद भिखारी हार न मानते हुए तमाम विरोध को विनम्रता से स्वीकारते हुए भिखारी को कला के स्तर पर संघर्ष करना पड़ता है।

भिखारी का 'बिदेसिया' नाटक इतना लोकप्रिय होता है कि उसके गीत भारत ही नहीं त्रीनिदाद, मारीशस, फिजी जहॉ भी भारतीय है वहॉ पहुॅच जाते है। भिखारी ठाकुर नाई जाति में पैदा होने के कारण जिंदगीभर ऊॅची जातिवालों के सामने हीन बनकर तथा अपमान को सहते हुए रहते हैं। इक्यासी वर्ष की उम्र में इस अदभुत लोक कलाकार की जीवन लीला समाप्त होती है। उपन्यास में लोकभाशा ठेठ भोजपूरी का अधिक प्रयोग हुआ है। भिखारी ठाकुर की जीवनी किस्सागोई के सरस सहज प्रवाह में बुनावट की है।

विवेच्य उपन्यास में कुतुबपुर, जिला आरा, मेदिनीपुर, खडगपुर, मुजफरपुर तथा कलाकत्ता का वर्णन मिलता है। इस उपन्यास का उद्देश्य लोक कलाकार भिखारी ठाकुर के जीवन– संघर्ष की त्रासदी को बताना है। निम्नजाति के व्यक्ति को भीषण जातिवादियों से सामना करना पड़ा इसका कारूणिक और विश्वसनीय चित्रण मिलता है। संक्षेप में 'सूत्रधार' उपन्यास में भिखारी ठाकुर के जीवन का, विषमताग्रस्त समाज करा, अमानवीय वर्ण–व्यवस्था का यथार्थ चित्रण परिलक्षित होता है।

'रानी का सराय' संजीव का किशोर उपयोगी उपन्यास है। इसका प्रकाशन सन् 1984 में अक्षर प्रकाशन, नई दिल्ली से हुआ है। इस उपन्यास में रानी की सराय गॉव की सामाजिक स्थिति, अंधविश्वास, भुतों की अफवाह तथा ऊॅच–नीच भेदभाव का यथार्थ अंकन हुआ है। गॉव की मूर्खता का फायदा सरकारी हाकिम तथा गॉव के ओझा उठाते है। ऊॅच –नीच की मानसिकता रखने वाले उच्च वर्ग के ठाकुर, सरपंच गॉव में निम्न जाति का शोषण करते है। ठाकुर सरमुखसिंह मानतें है कि निम्न जातियों का काम सेवा करना ही है। दलित गड़रिया जोखू ठाकूर से सवाल करता है तब ठाकुर उसे पीटते है। जोखू गुस्से में सरमुखसिंह को पुल पर से पानी में ढकेल देता है उससे ठाकुर सरमुखासिंह की मौत होती है। जोखू गॉव छोड़कर भाग जाता है। जोखू की कसर जोखू की पत्नी और बेटे सुरजू पर उतारी जाती है। गॉव उन्हें दागी और दोषी मानता है। जोखू का परिवार अपमान, नफरत, और उपेक्षित जिंदगी जीता है। गॉव में पाठशाला में बच्चों के द्वारा मास्टर हुसेनी समाज सुधार का काम करते है। पाठशाला में पढ़ने वाले सुरजू तथा अन्य बच्चों को प्यार और ममता का महत्त्व बलाते है। जिस पुल पर से जोखू ने सरमुखसिंह को पानी में ढकेलक हत्या की थी उसी पुल पर सरमुखसिंह के लड़के ब्रजबिहारी की जान सुरजू बचाता है। लेखक ने इस किशोर उपयोगी उपन्यास द्वारा बताया है कि ऊॅच–नीच, मालिक–गुलाब का रिश्ता ही गलत है। इस पार से उस पार को जोड़ने का पुल आदमी से आदमी को जोड़ने का काम करता है। अतः आवश्यक है कि मनुष्य मनुष्य से प्यार करें। मानवता से रहें यही इस उपन्यास का उद्देश्य है।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः कह सकते है कि संजीव ने अपने कथा– साहित्य द्वारा हर बार नई जमीन तालाश की है। अलग –अलग विषयों पर चुनौतीपूर्ण लिखा है। उनका कथा – साहित्य एक शोधार्थी की तहर परिश्रम से विषय में गहरे डूबकर लिखा हुआ है। अपने जिंदादिल व्यक्तित्व से मनुष्य के यथार्थ जीवन की समस्याओं को वे बड़े गहराई सें लिखते है, इसी कारण उनका लेखन पाठों के दिल – दिमाग को छूता है।

संजीव का पहला उपन्यास 'किसनगढ़ के अहेरी' में अवध गॉव किसनगढ़ के आजादी के बाद के सामंती रूप का, वर्ण विद्वेष, वर्ग वैषम्य का यथार्थ चित्रण किया है। सामंतियों के मिथ्या अहंकार का पर्दाफाश भी किया है। 'सर्कस' उपन्यास में सर्कस में काम करते वालों का बहुविध शोषण, आर्थिक, शारीरिक और भावात्मक को यथार्थता से व्याख्यायित किया है। 'सर्कस' में का करने वाले बौनों, हिजड़ों की दर्दनाक दास्तान को संजीव ने रेखांकित किया है। 'सावधान! नीचे आग है' उपन्यास में कोयला खदान में काम करने वाले मजदूरों की जिंदगी, भ्रष्ट व्यवस्था द्वारा होने वाला शोषण तथा खदान दुर्घटना से मौत से खेलती हुई दर्दनाक स्थिति को अभिव्यक्ति प्रदान की है। खदान दुर्घटना में मरने वाले मज़दूरों के परिजनों के साथ मैनेजमेंट तथा भ्रष्ट सरकारी अफसरों की अमानवीयता का यथार्थवादी चित्रण मिलता है।

'धार' उपन्यास में झारखंड के संथाल परगना में कोयला खदान में काम करने वाले संथाल आदिवासी की व्यथा को व्यापक फलक पर परिभाषित किया है। उपन्यास के पूर्वार्ध में संथाल परगना में कायेला खदान में काम करने वाले आदिवासियों की व्यथा तथा माफियों, ठेकेदारों, धर्मगुरू (ओझा) और पुलिस द्वारा आदिवासियों के शोषण का यथार्थ अंकन हुआ है। उपन्यास के उत्तरार्ध में आदिवासियों की चेतना, अधिकार बोध और संघर्ष का चित्रण है। 'पॉव तले की दूब 'उपन्यास में झारखंड के मेझिया, बाघामुंडी गॉव के आदिवासियों के कंगाल जीवन का, अंधविश्वास, कुपोषण, डायन जैसी बर्बर कुप्रथा, विस्थापन का तथा महाजन, ठेकेदार, पुलिस द्वारा शोषण का यथार्थ अंकन हुआ है।

'जंगल जहॉ शुरू होता है' उपन्ययास में बिहार और पश्चिमी चंपारण में लोकतंत्र और शासन के नाम पर पसरी हुई सामंती निरंकुशतला को तथा डाकू, भ्रष्ट पुलिस तथा नेताओं द्वारा थारू आदिवासियों पर किए वाले अत्याचार को बेबाकी से प्रस्तुत किया है। संजीव ने इस उपन्यास में स्पष्ट किया है कि डाकू से भी खतरनाक पुलिस है। 'सूत्रधार' उपन्यास में भोजपूरी के मशहूर लोकनर्तक भिखारी ठाकूर की जीवनी तथा सामाजिक विसंगितयॉ, वर्ण – व्यवस्था, ऊॅच –नीच आदि अमानवीय भेदों को सूक्ष्मता से रेखांकित किया हैं।

संदर्भ

1) किसनगढ के अहेरी – संजीव

2)सर्कस – संजीव

3) 'सावधान! नीचे आग है' – संजीव

4) 'धार – संजीव

5) पॉव तले की दूब– संजीव

6) 'जंगल जहॉ शुरू होता है– संजीव

7) कथाकार संजीव – गिरीश काशिद

8) सामाजिक यथार्थ और कथाकार संजीव – डॉ. शहाजहान मणेर

9) संत्र रामचन्द्र वर्मा – मानक हिंदी कोश पृष्ठ 435

10) संत्र श्री नवल जी – नालन्दा विशाल शब्दसागर, पृष्ठ 1135

11) संजीव – कुछ तो होना चाहिए न, पृष्ठ 89

12) डॉ. त्रिभूजन सिंह – हिंदी उपन्यास और यथार्थवाद पृष्ठ 44

13) अनूप शुक्ल – आकांक्ष और यथार्थ, पृष्ठ 33

14) प्रेमचंद – साहित्य का उद्देश, पृष्ठ 10

तृतीय अध्याय

संजीव के उपन्यासों में आदिवासी नारी की आर्थिक, सामाजिक सांस्कृतिक, धार्मिक, परिस्थितियॉ

संजीव के कथा – साहित्य में आदिवासी समाज की विभिन्न स्थितियों के यथार्थ का चित्रण भी बेबाकी के साथ परिलक्षित होता है, जैस –

आदिवासी समाज सदियों से जंगलों, पहाड़ों में रहता आया है। अज्ञानी, अनपढ़ उत्वसप्रिय तथा रूढ़िप्रिय होते से आदिवासी समाज की सामाजिक स्थिति अत्यंत दयनीय है। सरकार द्वारा आदिवासी समाज सुधर के लिए अनेक योजनाएँ कार्यान्ति की गई है किंतु सरकारी योजनाऑ की असफलता और आदिवासी समाज की अरण्यमय संस्कृति के कारण उसका विकास नहीं हो रहा है। विवेच्य कथा – साहित्य में आदिवासी समाज की संथाल, थारू, हो तथा बॉडा आदि जनजातियों के सामाजिक जीवन का चित्रण परिलक्षित होता है।

रहन –सहन

'जंगल जहॉ शुरू होता है' उपन्यास में थारूओं का स्थान बताते हुए उप– पुलिस महानिरीक्षक सिनहा साहब कहते है– ''उत्तर में पड़ोसी देश नेपाल, पश्चिम में पड़ोसी प्रांत उत्तर प्रदेश, बीच में प्रायः दुर्भेद्य जंगल, पहाड, मीलों फैले गने के खेत... दुर्गम पहाड़ों, दर्गम जंगलों, नदी– नालों, गन्ने के खतों से भी बड़ा और अभयारण्य है– इलाके के ये थारू जनजाति के लोग।'' इस कथन से विदित होता है कि आदिवासी समाज की विविध जनजातियों के लोग घने जंगलों, पहाड़ों और वनों में निवास करत है।

'पॉव तले की दूब' उपन्यास में कथा–नायक आदिवासियों की सामाजिक स्थिति के बारे में कहता है– ''आदिवासी लोगों की दो कमजोर नसें है... अरण्यमुखी संस्कृति उन्हें सभ्यता के विकास से जुड़ने नहीं देती और उत्सवधर्मिता इन्हें कंगाल बनाती रहती है। हॅडिया या दारू ये पिऍगे ही और हर उत्सव को मस्त होकर मनाऍगे।''[52] आदिवासी समाज की जनजातियॉ कबीलाई पध्दति से रहती है। हर जाति को अलग बोली होने से दूसरी जाति के साथ इनका संपर्क नहीं होता।

जंगलों, वनों, पहाड़ों में आदिवासी रहते है। दूषित पानी पीने से, चिकित्सा के अभाव में, सुविधाओं से वंचित रहने से तथा कुपोषण के कारण आदिवासी बीमारी से जूझते है। कथा– नायक आदिवासियों की बस्ती से जाते समय देखता है– ''हैरत थी उनकी काया को देखकर। कुपोषण और रोग की मारी छायाएँ और उन पर चिपकी फटी–फटी उजली ऑखे... कई लड़के– लड़कियॉ और बूढ़े लकवे के मारे– से दिख रहे थे और उस पर उनके स्थाह चेहरों की भयावनी उजली ऑखें।''[53] इस कथन से विदित होता है। कि आदिवासी समाज की सामाजिक स्थिति सुविधाओं से वंचित होने से दयनीय बनी हुई है।

थारू जनजाति का पेहराव, वेशभूषा –केशभूषा अनोखी लगती है। थारूओं का रहन–सहन मामूली है। इनका पहनावा पुरूष केवल एक लंगोटी ही पहने है। थारू स्त्रियों कुर्ता तथा काले रंग का घाघरा पहनती है। थारूओं में सभी विवाहित पुरूषों को स्त्रियों के अधीन रहना पड़ता है। पत्नी का आदेश मानना पुरूष का धर्म समझा जाता है। संथाल लोग वस्त्रों का बहुत काम उपयोग करते है। पुरूष केवल घुटनों से ऊपर जंघाओं तक धोती पहने है। स्त्रियों भी केवल एक धोती ही पहनती है जो घुटनों तक होती है। वक्षस्थल पर कोई कपड़ा नहीं होता है। संथाल जनजाति में संयुक्त परिवार प्रणाली प्रचलित है। ये परिवार पितृसत्तात्मक होते है। हो जनजाति के लोग पत्तों से शरीर को ढॅकते है। शहरी संस्कृति के संपर्क में आगे से कुछ लोग वस्त्र पहनने लगे है।

संथालों के घर कच्ची मिट्टी, बॉस और लकड़ी के बन होते हे। घरों में सफाई का अधिक ध्यान रखा जाता है। 'धार' उपन्यास में अविनाश शर्मा मंगर से संथालों के घरों को सफाई के बारे में कहते हैं– ''आपको एक भी आदिवासी का घर गन्दा नहीं मिलेगा। न अन्दर से, न बाहर से, चाहे वे सूअर ही क्यों न पोसें।''[54] इससे स्पष्ट होता है कि संथाल आदिवासी घरों की सफाई में अधिक ध्यान देते है।

खान –पान

खान –पान के लिए आदिवासी शिकार करते है। जंगलों में फलों, कंदमूलों को खाकर जीविकोपार्जन करते है। 'धार' उपन्यास में लेखक लिखते है – ''इस

अजीबोगरीब शिकार में उन्होंन तेरह बगुले, सात सारस, आठ मैनाऍं मारी।''[55] इससे स्पष्ट होता कि आदिवासी जंगलों में शिकार करके, कंदमूलों तथा फलों के द्वारा जीविकोपार्जन करते है।

जति पंचायत

आदिवासियों में जाति पंचायत व्यवस्था को असाधारण महत्व है। आदिवासी बाहमजगत के संपर्क में न आने से, जंगलों में कबिलाई पध्दति से रहने से अपनी–अपनी जाति पंचायत के अधीन रहकर जिंदगी जीते हैं। जाति पंचायत आदिवासियों का नियंत्रण मंडल है। यह मंडल न्याय देणे का महत्त्वपूर्ण कार्य करता है। इस पंचायत में विवाह तय करना, तलाक देना, जातिबाहय कर्म करने पर सजा देना, भ्रष्ट होने पर सजा देना, के झगडें आदि पर जाति पंचायत फैसला सुनाती है। जाति पंचायत के नियम अलिखित होते है, वे सर्वसामान्य होते हैं। 'धार' उपन्यास की नायिका मैना जातिबाहम कर्म करती है यानि पति होते हुए भी गैर आदिवासी मंगर के साथ रहती है, उसे अपना पति मानती है। तब संथाल जाति की जाति पंचायत लॉबीर चबूतरे पर होती है जिसमें सर्वसम्मत फैसला मोडल (चौधरी) सुनाते है–''मैना की मजबूरी को ध्यान में रखते हुए कसूर माफ कर उसे पुनर्विवाह की इजाजत देती है।... फोकल के जातिच्युत होने के कारण फोकल और मैना से जन्मे बच्चे भी मैना के हुए।''[56] इससे स्पष्ट होता है कि आदिवासी समाज में जाति पंचायत के द्वारा अन्याय, अत्याचार एवं अनैतिकात पर न्याय दिया जाता है। जाति पंचायत को अलग –अलग जनजातियों में 'जमात', 'ग्राम पंचायत', 'सभासद मंडल', 'स्थानिक ग्रामसभा', 'लॉबीर' आदि नामों से पहचाना जाता है। अतःकहा जा सकता है कि आदिवासी समाज में जाति पंचायत का स्थान बहुत ही महत्त्वपूर्ण है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि आदिवासी समाज में जाति पंचायत व्यवस्था आदिवासियों का नियंत्रण मंडल है, जो समाज में न्याय देने का महत्त्वपूर्ण काम करता है।

आर्थिक स्थिति का यथार्थ

आदिवासी समाज की विभिन्न जनजातियॉ कबीलाई पध्दति से जंगलों तथा पहाड़ों में रहती है जिसके पास न रहने के लिए घर है, न उन्हें दो वक्त की रोटी मिलती है। उस समाज की आर्थिक स्थिति बहुत दयनीय है। आदिवासी समाज आर्थिक अभाव में अत्यंत दयनीय अवस्था में रोजी –रोजी के लिए जूझता हुआ परिलक्षित होता है। बाहमजगत का व्यवहार तथा सभ्यता का ज्ञान न होने से उनका कोई निश्चित काम–काज नहीं है। जंगलों से खाद्य सामग्री कंदमूल, फल –फूल, जड़ी–बुटियॉ निकालकर बेचते हैं। शिकार कर, चावल की खेती करके, लकड़ी लोहे, जूट बॉस तथा मिट्टी द्वारा चीजें बनाकर जीविकोपार्जन करते हैं। 'धार' उपन्यास में संथाल आदिवासी समाज की आर्थिक स्थिति के बारे में अविनाश शर्मा मंगर को बताते हैं – ''अभी धान की रोपनी का वक्त है– कुछ अपने खेत, कुछ मजूरी, थोड़ी चहल –पहल नजर आ रही है। अभी.... अवैध कोयला खनन भी गड्डों में पानी भर जाने से बंद है।... रातभर अवैध कोयला खनन में काम करने के बाद दिन को सोना।''[57] इस कथन से विदित होता है कि आर्थिक उत्पन्न का निश्चित कोई साधन न होने के कारण संथाल आदिवासी को अवैध कोयला खनन करके तथा सिलतोड़ी करके जीविकोपार्जन करते है।

'जंगल जहॉ शुरू होता है' उपन्यास में थारू आदिवासी जंगल में रहते है। जीविकोपार्जन के लिए वे कुछ करना चाहते हैं लेकिन आर्थिक अभाव में कुछ नहीं करते हैं। कथा– नायक थारू आदिवासी बिसराम की आर्थिक स्थिति के बार में कहता है– ''जंगलों में बेत हैं। हाथ में हुनर, है, झूडी, खॉची तो बना ही सकत है वह लेकिन उसे लाग कौन देगा? बेंत का ठेकेदार एक जल्लाद... कहॉ स`ले आए रकम घूस–पाति के लिए।''[58] इस कथन से विदित होता है कि थारू आदिवासी बिसराम आर्थिक अभाव कुछ नहीं कर सकता इस कारण वह दयनीय जिंदगी जी रहा है। 'महामारी' कहानी में आदिवासी परिवार आर्थिक अभाव में गरीबी, भुखमरी में जीता हुआ परिलक्षित होता है। रंगई बहू के घर में बच्चे खाते हुए देखकर कथा–नायक कहता ै।– ''चितकबरी मक्के की सूखी मोटी रोटी के टुकड़े और बसाती बासी दाल लिये बैठी थी नंग–धडंग बच्चों की टोली।''[59]

निष्कर्षतः कहना सही होगा कि आदिवासियों का जीवन आर्थिक अभव में गरीबी तथा भुखमरी से जूझता हुआ दृष्टिगोचर होता है।

सांस्कृतिक स्थिति का यथार्थ

संस्कृति का संबंध मनुष्य के उस समस्त तौर– तरीकों एवं आचार–विचार से है। संस्कृति का आधार समाज है और समाज को संचलित करने का कार्य संस्कृति करती है। विवेच्य कथा –साहित्य में सांस्कृतिक स्थिति का चित्रण पर्याप्त मात्रा में मिलता है।

संस्कृति के बारे में डॉ. ज्ञानचंद गुप्त लिखते है– ''मनुष्य के रूप में एक सामाजिक सदस्य के नाते जो वह करता है, सोचता है वह सब जटिल सांस्कृतिक–चक्र से बॅधा है। संस्कृतिक ही वह आधार है, जिसके माध्यम से व्यक्ति ज्ञान, कला, नैतिकता, प्रथाएॅ एवं परम्पराएॅ सीखता है। संस्कृति एक सामाजिक विरासत है।''[60] इस कथन से विदित होता है कि मनुष्य संस्कृति के द्वारा सबकुछ सीखता है। आदिवासी समाज संस्कृतिप्रिय होने के कारण सांस्कृतिक के विभिन्न रूपों का चित्रण संजीव ने किया है।

लोकगीत

लोक में प्रचलित गीत ही लोकगीत कहलाते है। आदिवासियों की अलग–अलग जातियों में लोकगीत प्रचलित है। आदिवासी उत्सवप्रिय होने के कारण समूह से मिलकर उत्सव मनाते हैं। उत्सवों, पर्वो एवं संस्कारों में समूह से नाचते हुए गाकर अपनी संस्कृति का परिचय कराते है। आदिवासियों के लोकगीतों में उत्सव पर्व, सामूहिक नृत्यगीत, प्रेमगीत, जागरण गीत, संथाली गीत और पारंपारिक गीत द्वारा संस्कृति के सभी आयामों के दर्शन होते हैं।

उत्सव पर्व

'जंगल जहॉ शुरू होता है' उपन्यास में थारू जनजाति सहोदरा माई का उत्सव पर्व मनाते समय थारू – बालाएँ, किशोरियॉ तथा जवान सभी नंगे पॉव नाचते है।

''बाबा जइहें हाजीपूर, भइया जइहें पटना,

कि भइया जइहें पटना

हो भइया जइहें पटना
से सइहॉ जइहें उहें बेतिहा नौकरिया
सइहॉ जइहॉकृ।''[61]

थरूहट की अप्सराएँ कभी झुक– झुककर, कभी सिमट –सिमटकर लहरों की हिलकोरों पर नाच रही है – सुध –बुध खोकर।

'धार' उपन्यास में संथाल आदिवासी सांस्कृतिक कार्यक्रम में संथाल का जागरण गीत नृत्य के माध्यम से प्रस्तुत करते हुए सभी लोगों को जागने का तथा नशे की खुमारी में नही पड़ने का गीत गाते हैं–

''दे वाहा बिरिट – पे – ए लगन विरिट पे – ए

जपित रे दो आदो वोया वन वन ताहे ना।''[62]

''आप यहॉ है' कहानी में आदिवासी नारी हिदिया मानवता के बार में सोचती हुए सामुहिक नृत्य का आदिवासी गीत गाती है–

''स्वरग राज केतिक सुंदर हमार लगिन

सेना से सिंग रहौ, रूपा सजावारले,

भूख नखे, पियास नखे, ओ हो रे...

जेर नखे, जुलुम नखे, लडाई नखे, झगडों नखे, ओहो रे।''[63]

लोककथा

आदिवासी समाज की विभिन्न जातियों में भिन्न –भिन्न लोककथाएँ पायी जाती हैं। इन लोककथाओं का प्रचार अधिकतर अनपढ़ तथा आदिवासी लोगों में होता है। 'पॉव तले की दूब' उपन्यास में बजल बटकुच लोककथा का संदर्भ कथा

–नायक देता है– ''बजलमाझाी संथाली –संगीत के शिखर थे। प्रथम हुल –विद्रोह में जब संथालों ने सीधू कान्हू के आह्‌वान पर शोषक महाजनों, जमींदारों, कारिंदो के विरूध्द अभियान लिया तो बजलमाझाी भी इससे अलग न रह सके। उन्होंने एक अत्याचारी महाजन रूपसिंह तमोली की एक टीले पर हत्या कर दी। फिर सिउड़ी जे लाए गए।कृफॉसी की सजा सुनाई गइ। जेलर अंग्रेज था... मायारहित, लेकिन उसकी बेटी ने जेल में बजल के संगीत को सुना को सुना तो आकर्षित होती चली गई। अंतत. बेटी के अत्यधिक अनुरोध पर बजल को न सिर्फ रिहा किया गया, बल्कि उसी लड़की से शादी कर दोनों को जेलर साहब ने इंग्लैण्ड भी भेज दिया।''[64] इससे स्पष्ट है कि लोककथा के द्वारा अतीत, इतिहास संस्कृति की पहचान तथा जुल्म के खिलाफ नई पीढ़ी के लिए प्रेरणा मिलती है।

'दुनिया की सबसे हसीन औरत' कहानी में औरॉव आदिवासी औरतें चेहरे पर तीन गोंदने गुदवाती है। इन गोंदनों का मतलब और मकसद कथा– नायक इन शब्दों में बताता है– ''ओरॉव मर्द सरहुल के पर्व में नशे में थे तब मुगलों का हमला होता है। तब रानी सिनगीदाई और सेनापति की बेटी कैलीदाई मर्दाना पोशाक पहनकर मोर्चा सॅभालते है। तीनों हमलों में मुगलों को शिकस्त देते है। गद्‌दार सुंदरी के चलते भेद खुल जाता है। चौथे हमले में बहादूर औरतों को पकड़कर तीन शिकस्त का बदला चेहरे पर तीन बार दागकर लेना और फिर उन दागों को कलंक न मानकर सभी औरॉव औरतें सिंगार के रूप अपना लेते हैं।''[65] इस लोककथा द्वारा कथा नायक ओरॉव नारी को जुल्म की खिलाफत करनें के लिए बतात है। इस वीर –गाथा द्वारा अत्याचार के खिलाफ लड़ने की चेतना जागृत होती है।

'धार' उपन्यास में संथाल आदिवासी भोज उत्सव मनाते है। ओरॉव जनजाति में बारह वर्ष में एक बार 'जनी –शिकार' पर्व मनाया जाता है। इससे स्पष्ट होता है कि संथाल आदिवासी उत्सव पर्व धूमधाम से मनाते है।

लोक विश्वास

आदिवासी समाज अज्ञानी, अनपढ़ तथा सभ्यता से दूर जंगलों में रहने से इनमें लोक विष्वास तथा अंधश्रध्दा का प्रचलन दृश्टिगोचर होता है। लोक विश्वास तथा अंधश्रध्दा को आदिवासी समाज में बहुत ही महत्त्व दिया जाता है। डॉ. सुरेश

बाबर का कथन सही है कि ''लोक विश्वास और लोक रूढ़ियॉ भी संस्कृति के अंग है।''[66] जंगल जहॉ शुरू होता है' उपन्यास में थाय जनजाति का अंधविश्वास है कि गाय का दूध पीने स`लेरू की आत्मा कलपती है। इस कारण थारू लोग काय का दूध पीते नहीं है। हिरण का मांस नहीं खाते। हिरण मारने –खाने से हैजा होता है। 'धार' उपन्यास में संथाल जनजाति में अद्‌भूत लोकाचार है कि भ्रष्ट होते ही आदमी का श्राध्द कर देना।

संस्कार

जीवन को सुस्कृत बनाने के लिए जो सामाजिक विधान किए जाते है उन्हें 'संस्कार' कहा जाता है। आदिवासी समाज की अलग–अलग जातियों में विवाह संस्कार, मुण्डन संस्कार, मृतक संस्कार आदि की पध्दतियॉ अलग –अलग है। 'थारूओं' में विवाह करने से पहले इनमें सगाई होती है। कन्या तथा वर पक्षवाले जब एक –दूसरे के एकसूत्र में बॉध देने का निश्चय कर लेते हैं बत वर की ओर वे कन्या मिठाई तथा वस्त्र भेजा जाता है। 'संथाली' जनजाति में अपने उपगोत्र के अंतर्गत विवाह नहीं कर सकते चूॅकि संथाली गॉवों में एक ही उपगोत्र के लोग रहते है। विवाह के अल प्रकार प्रचलित है। 'थारू' परिवारों में एक विशेष उल्लेखनीय बात यह कि इनमें स्त्रियों का स्थान पुरूषों से श्रेष्ठ है। यहॉ पुरूष स्त्रियों के अधीन रहते है।

मृत्यु संस्कार

'जंगल जहॉ शुरू होता है' उपन्यास में थारू जनजाति के बिसराम की लड़की दुलारी की मृत्यु सॉप के डॅसने से होती है। कथा –नायक कहता ळै' ''न जलाई जा सकती थी न गाड़ी। बड़े –बूढ़े जो कहते है, वही करना होता है।.... लाश का परवाह (प्रवाहित) कर दिया जाए। कई बार तो गंगा मइया खुद ही खींच लेती है विष और मुर्दा जी उठता है।''[67] इस कथन से विदित होता है कि आदिवासियों में संस्कार के अलग –अलग रूप दिखाई देते है।

श्राध्द भोज

संथालों में पुरूष की मौत होती है तब श्राध्द भोज दिया जाता है। 'धार' उपन्यास में मैना का पति मंगर की मौत होने पर लेखक लिखते हैं ' ''कुल बीस गॉवों में मंगर के श्राध्द भोज का न्योत बॅटा, बीस गॉव के लोग बॉसगड़ा आये। स्त्री, पुरूष, जवान, बूढे, बच्चे सब यह एक अजब भोज था जिसमें सभी आने वालों की लायी सामग्री के एक जगह रॉधा गया। भोज के पहले मैना ने अपनी सूनी मॉग, सूनी कलाई और सफेद साड़ी में बिरादरी को हाथ जोडत्रकर अर्ज किया।''[68] उपर्युक्त कथन से स्पष्ट होता है कि आदिवासी समाज में लोक विश्वास और लोक रूढ़ियों का प्रचलन अधिक मात्रा में मिलता है।

निष्कर्षत : कहा जा सकता है कि विवेच्य कथा – साहित्य में आदिवासी समाज में लोकगितों का सुंदर चित्रण मिलता है। सहोदरा माई का उत्सव पर्व, सामूहिक नृत्य का गीत, जागरण गीत, पारंपारिक गीत तथा प्रेम गीत आदि का चित्रण है। विविध लोक – कथाएँ आदिवासियों के शौर्य का इतिहास बताती है।

पारिवारिक स्थिति का यथार्थ

संजीव के कथा –साहित्य में आदिवासी समाज के परिवारिक जीवन से संबंधित विभिन्न पहलुओं को चित्रण परिलक्षित होता है।

परिवार मानव –सुमदाय की आधारभूत इकाई है। मनुष्य की प्रारंभिक एवं मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाले संगठन एवं संस्थाओं में परिवार का स्थान प्रथम एवं प्रमुख है। बर्गेस एवं लॉक परिवारिक समूह के बारे में कहते है। ''परिवार व्यक्तियों का एक ऐसा समूह है जो विवाह, रक्त अथवा दत्तक बंधनों से बंधा होता है। इसके द्वारा एक अकेले घर की रचना होती है, इसके सदस्य पति – पत्नी, माता' पिता, भाई बहन की सामाजिक भूमिका में एक 'दूसरे से अंतर्क्रिया तथा अंतर्सम्प्रेषण करते हुए एक सामान्य संस्कृति की रचना करते हैं।''[69] इस कथन से विदित होता है कि परिवार व्यक्तियों का समूह है जो सामान्य संस्कृतिक की रचना करता है। यह परिभाषा विवाह के आधार पर बन आधुनिक वैयक्तिक लघु परिवारों पर ही अधिक चरितार्थ होती है। आदिवासी समाज संयुक्त परिवार तथा कबीलाई

जीवन पध्दति से रहता है। 'धार' उपन्यास में संथाल जाति के लोग संयुक्त परिवार पध्दति में जीवन व्यतीत करते हैं, ये परिवार पितृसत्ताक हैं। अधिकांश एक ही घर में माता– पिता संतानें तथा विवाहित पुत्रों की पत्नियॉ और बच्चे रहते हैं। परिवार का सबसे बड़ा बूढ़ा परिवार का मुखिया होता है।

पति –पत्नी

'धार' उपन्यास में संथाल पति –पत्नी की पारिवारिक स्थिति का चित्रण हुआ है। मैना और उसका पति टेंगर के बीच तनावपूर्ण संबंध हैं। टेंगर और मैना के बीच बार –बार झगड़े होते है। परिणाम यह होता है कि मैना अपने पति को त्याग देती है। मंगर से बंध बनाती है। 'जंगल जहॉ शुरू होता है' उपन्यास में थारू जनजाति के बिसराम और उसकी पत्नी के बीच पारिवारिक स्थिति तनावपूर्ण है। बिसराम और उसके पत्नी में कर्तव्यपरायणता है। जब डाकू बिसराम के पत्नी को पकड ले जात हैं एक रात वह डाकुओं के कब्जे में रहती है। जब वापस आती है तब बिसराम का पत्नी पर से विश्वास अविश्वास में बदल जाता है। बिसराम कहता है– ''डुब मरने को कोई नदी –तालाब, नाहर नहीं मिली।''[70] इस कथन से विदित होता है कि परिस्थितियों की वज़ह से दाम्पत्य जीवन में दरारें निर्माण हुई दिखाई देती है। गरीबी, बेकारी तथा व्यसनाधीनृता ही तनावपूर्ण संबंध का कारण है।

'टीस' कहानी में संथाल आदिवासी शिबुकाका की पत्नी गॉव के पुजारी पंचानन भट्टाचार्य के साथ अनैतिक संबंध रखती है। शिबुकाक इन दोनों का एकसाथ सोते हुए देखने पर गुस्से में पत्नी मताई की हत्या कर देते हैं। 'जंगल जहॉ शुरू होता है' उपन्यास में थारू जनजाति की खूबसूरत नारी मलारी जो रामदास उर्फ 'लॅगड़' की बीवी है। पुलिस उप –अधीक्षक कुमार अपने अधिकार का रोब दिखाकर मलारी से अनैतिक संबंध रखता है। 'गुफा का आदमी' कहानी में बोंडा आदिवासी नारी सोमा का अपने पति शकुरा पुतोह से अनैतिक रिश्ता बनाता है। प्रत्यक्ष दोनों को साथ में देखने पर सोमा पति को जाने से मार डालती है। इससे स्पष्ट होता है कि आदिवासी समाज में पारिवारिक जीवन में पति–पत्नी के रिश्ते अनैतिक संबंध के कारण दाम्पत्य जीवन बरबाद हुआ दृष्टिगोचर होता है।

माता पिता और संतान

मता–पिता का संतान के साथ खून का रिश्ता होता है और वे इस रिश्ते को निभाने के लिए यथासंभव प्रयत्न ही नहीं बलिदान तक करते है। माता–पिता के लिए बच्चे तथा उनका प्यार महत्त्वपूर्ण होता है। आदिवासी समाज में माता–पिता का संतान के प्रति वात्सल्य ग्रेम प्रेम दृष्टिगोचर होता है। 'धार' उपन्यास मे। मैना की लड़की सितवा खलासी के साथ भाग जाती है तब मैना को बहुत बुरा लगता है। बाद में सितवा का पति बेकार रहने पर सितवा को मारपीट कर घर से निकाल देता है। मैना अपनी परित्यक्ता बेटी सितवा को गंदी साड़ी में देखकर कहती है– ''अब खड़ी क्या है शैतान! ! लाख गुनाह करे, देश, इस दुनिया में तुझो कोई माफ नहीं कर सकता। सिर्फ एक जगह है जहॉ माफी मिल सकती है, वो है मॉ का दामन।''[71] इस कथन से विदित होता है कि मॉ संतान के लिए कभी दुश्मन नहीं बन सकती। वह हमेशा संतान का सुख ही देखना चाहती है।

'जीवन के पार' कहानी में 'हो' जनजाति का कथा –नायक मानसिंह सुंडी बामई तिर्की से बहुत प्यार करता है। दोनों की शादी करने से पहले बामई तिर्की का बाप गोनोंग (वधू मूल्य) मॉगता है। ज्यादा से ज्यादा वधू मूलय वसुल करने की जिद में बामई का विवाह नहीं करता। बामई कुमारी ही मर जाती है। इससे स्पष्ट होता है कि आदिवासी पारिवारिक जीवन में संस्कृति, परंपरा का पालन करते है उनकी अस्मिता रूढ़ियों और पूॅजीवादी हथकंडों के कारण तार –तार हो रही है।

आदिवासी परिवार में युवा वर्ग

विवेच्य कथा– साहित्य आदिवासी समाज का युवा वर्ग अशिक्षित तथा बेकार है। 'पॉव तले दूब' उपन्यास कालीचरण, गोपाल, कालिया और मेघवा अनपढ़ हैं। युवकों में व्यसनाधीनता नज़र आती है। शराब पीते हैं, शिकार करते हैं। 'धार' उपन्यास में सितवा, टिपका लुता बेकार भटकते हैं। 'जंगल जहॉ शुरू होता है' में काली अन्याय, अत्याचार के खिलाफ लड़ने के लिए डाकू बन जाता है। कुछ कारखानों में खदानों में, काम कर जीविकोपार्जन करते है। अतंतः आदिवासी समाज में युवा वर्ग अनपढ़ अज्ञानी होने के कारण बेकार तथा व्यवसनाधीन बना है।

निष्कर्षतः स्पष्ट है कि आदिवासी समाज में पारिवारिक जीवन में गरीबी, बेकारी तथा अनैतिक संबंधों के कारण तनाव में हत्याएँ घटित हुई हैं। पारिवारिक जीवन में तथा अनैतिक संबधों के कारण तनाव में हत्याएँ घटित हुई है। आर्थिक अभाव के कारण युवा वर्ग बेकार तथा व्यवसनाधीन बना हुआ परिलक्षित होता हे।

धार्मिक स्थिति का यथार्थ

धर्म एक शक्ति भी है विश्वास भी। इसकी धारण अमुर्त एवं अति प्राचीन है। धर्म के बारे में डॉत्र ज्ञानचंद गुप्त ने लिखा है– ''सांस्कृतिक मान्यता प्राप्त विभिन्न पवित्र विश्वास ही धर्म है जो मानव समाज को अपनी पूर्व पीढ़ियों से सामाजिक विरास के रूप में प्राप्त होते हैं एवं आकस्मिक अपदाओं को सहन करने का सम्बल प्राप्त करते है।''[72] इस कथन से विदित होता है कि धर्म एक ऐसा विश्वास है जो मनुष्य संकट के समय सहन करते की शक्ति देता है। आदिवासी समाज अज्ञानी, अनपढ़ तथा अरण्य में रहने की वजह से इस समाज में अंधश्रध्दा, देवता की प्रसन्न करने के लिए मनौतियॉ मनाना, बलि देना, दान देना, पाप– पुण्य, प्रायश्चित, पूजा करना, अंधश्रध्दा के द्वारा बर्बर कुप्रथाएँ तथा टोटका करता आदि धार्मिक कर्मकांड दुश्टिगोचर होते है। विवेच्य कथा – साहित्य में आदिवासी समाज की धार्मिक स्थिति का विवेचन यहॉ प्रस्तुत है –

देवी देवताओं की पूजा

थारू लोग सहोदरा माई की, सोमेश्वर की पूजा करत है। पूजा के समय बलि चढ़ाने के लिए खॅसी, कबूतर तथा थाली में टिकरी, माटी का दिया, अक्षत, फूल, सिंदूर और चुनरी लेकर पूजा करते हैं। 'महामारी' कहानी में गॉव में चेचक की बीमारी फैलती है, जिसे मातामाई कहते हैं। मातामाई के संकट से बचने के लिए आदिवासी औरतें पचरा देवी पूजन का लोक 'गीत गाते बड़के चोरे पर जल चढ़ाते हैं। मातामाई के जाते ही कच्ची और पक्की पूजा करते हैं। 'जंगल शुरू होता है' उपन्यास में थारू जनजाति का बिसराम गाया का दूध लाचारी में बच्ची को पिलाता है तब इसका प्रायश्चित कर और पूजा के बाद बिसराम परिवार को फिर से शुध्द

मान लिया जाता है। अतः स्पष्ट है कि संकट, अपराध से मुक्ति पाने के लिए देवी –देवताओं की पूजा आदिवासी करते हैं।

अंधविश्वास

आदिवासी समाज में अंधविश्वास की वज़ह से बर्बर कुप्रथाएँ दृश्टिगोचर होती हैं। गॉव में कोई अशुभ घटना होती है या कोई बीमार पड़ता है, या किसी की गाय, बकरी मर जाती है, तब यह माना जाता है कि किसी मनहूस व्यक्ति के कारण अशुभ घटनाएँ घटित होती है। तब उस व्यक्ति को जानगुरू ओझा डायन घोषित करता है। 'धार' उपन्यास में संथाल आदिवासी मैना तथा मैना की मॉ को जानगुरू ओझा डायन घोषित करता है क्योंकि मैना तथा मैना की मॉ मनहूस होने से अशुभ घटनाएँ होती है। संथाल आदिवासी मैना की मॉ को डायन घोषित करने पर वह गॉव छोडकर जाती है।

'पॉव तले की दूब' उपन्यास में मंगरी नामक बॉझ औरत को डायन समझकर जान से मार देते हैं क्योंकि मंगरी के कारण गॉव में बीमारी फैलती थी, लेरू –काडा मरते थे। अतःस्पष्ट है कि आदिवासी समाज में अंधविश्वास के चलते बर्बर कुप्रथा प्रचलित है।

टोना –टोटका करना

आदिवासी समाज में टोना –टोटका करने से सफलता मिलती है। इस वजह से 'महामारी' कहानी में रंगई बहू को टोना –टोटका करने की आदत है। बिल्ली की खेढी घर में रखने से लखपति बनते हैं और बॉझ औरत को लड़का होता है। लेखक लिखते हैं– ''तब से रंगई बहू बिल्लियों की टोह में रहती है।... किसी के गभिन होने का आभास होता उन्हें दूध रोटी दे देकर परकाया करती ।कृभाग्य जगाने की कोशिश में कई –कई खेढ़ियॉ जमा हो चली थी उसके पास।''[73] इस कथन से विदित होता है कि टोना –टोटका करने से असाध्य चीजें साध्य होती है। इस आशा में आदिवासी टोना –टोटका करते हैं। तंत्र –मंत्र से असंभव को संभव करने की आशा आदिवासी रखते हैं। 'पॉव तले की दूब' में कालीचारण किस्कू बाध के नाखून से, हाड़ से, मंतर के द्वारा असाध्य करने में विश्वास रखता है। इस

प्रकार आदिवासी समाज में शकुन, अपशकुन, डायन प्रथा, देवता को बलि चढ़ाना, मनौतियॉ मानाना, मंत्र'तंत्र, टोना –टोटका, मांत्रिक के मुख से देवता का बोलना, पूजा– अर्चा करना, आदि विविध आयामों द्वारा धार्मिक अंधविश्वास दिखाई देता है।

उपर्युक्त विवेचन के पश्चात् निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि आदिवासी समाज में धार्मिक रूप से अंधविश्वास अधिक मात्रा में दृष्टिगोचर होता है। आदिवासियों के अज्ञान, अंधविश्वास का लाभ ओझा (पंडित) लेता है।

निष्कर्ष

'आदिवासी' 'मूल निवासी'किसी देश या प्रांत के वे निवासी जो बहुत पहले से वहॉ रहते आए हो', और 'जिनके बाद और लोग भी वहॉ आकर बसे ही' किंतु इनका 'किसी क्षेत्र के मूल निवासी' अर्थ लेना अधिक ठीक लगता है। 'आदिवासी' की प्राप्त परिभाषाओं का अध्ययन करने के पश्चात् इसकी तर्कसंगत परिभाषा इस प्रकार दी जा सकती है – ''ऐसा समूह जो एक सामान्य भू– भाग पर निवास करता है, वहॉ भी वह अपना पृथक, अस्तित्व बनाए हुए जिसके सदस्य एक बोली बोलते हैं, वे आदिवासी हैं।''

विवेच्य कथा –साहित्य में संथाल, थारू, उरॉव, हो, मुंडा, गुलगुलिया, बोंडा आदि आदिवासी जातियों का सामाजिक यथार्थ परिलक्षित होता है। आदिवासी का जीवन गरीबी तथा आर्थिक अभावों में रोजी –रोटी की चिंता में बितता है। विवेच्य कथा साहित्य में संथाल आदिवासी और थारू आदिवासी का चित्रण अधिक मात्रा में हुआ है। आदिवासी समाज अज्ञानी, अनपढ़ अंधश्रध्दालू तथा कुप्रथाओं में उलझा हुआ है। आदिवासी समाज अनेक वर्षो से जंगल और वनों में रहकर जीविकोपार्जन करता है। आदिवासियों की कुछ जातियॉ शहरों के संपर्क में आने के कारण खदानों में, कारखानों में मजदूरी करती है। संजीव ने कारखाना मालिक, खदान मालिक, भ्रष्ट अधिकारियों, ठेकेदारों, भ्रष्ट पुलिस, सूदखोर दलाल, मुखिया, डाकू द्वारा आदिवासियों के अमानुषित दोहन के प्रति विद्रोह प्रकट किया है। पूँजीपति, ठेकेदार, भ्रष्ट अधिकारी और पुलिस द्वारा आदिवासियों के सर्वाधिक शोषण का यथार्थ अंकन किया है।

आदिवासी समाज घने जंगलों में, पहाड़ियों में तथा वनों में निवास करता है। संजीव ने ऐसे दुर्गम इलाकों में जाकर उनके सामाजिक यथार्थ के विभिन्न रूपों को उजागर किया है। जैसे –उनकी जाति पंचायत, पारिवारिक जीवन, पितृसत्ताक प्रणाली का यथार्थ अंकन आदि। आदिवासी समाज की सामाजिक स्थिति दयनीय है। आदिवासी संस्कृति उनकी अस्मिता रूढ़िवादियों के कारण तार –तार हो रही है। उनके अज्ञान तथा अंधश्रध्दालू वृत्ति का लाभ धर्म के पंडित लेते है और उन्हें कंगाल बनाते है। संजीव ऐसे ढोंगी, ओझाओं (पंडितों) का प्रतिरोध तथा उनके प्रस्ताव को ठुकराने का आह्‌वान करते है। भ्रष्ट पुलिस व्यवस्था की अमानुषिकता के प्रति वे आघात करते है।

विवेच्य कथा – साहित्य में धर्म तथा धर्म से उत्पन्न कर्मकांड से निर्मित अंधविश्वासों, डायन जैसी बर्बर कुप्रथा का तथा अद्‌भूत लोकाचार का यथार्थ, अंकन दृष्टिगोचर होता है। विवेच्य कथा –साहित्य में आदिवासी समाज के अर्थाभाव की समस्या का यथार्थ चित्रण किया है। आदिवासी अनपढ़ अंधश्रध्दालू तथा उत्सवप्रिय होने के कारण रहन –सहन, भुखमरी, बेकारी तथा विस्थापित आदि अनेक समस्याओं से जूझता हुआ परिलक्षित होता है। संजीव ने आदिवासी समाज को आर्थिक बदहाली को करूणाभरी निगाहों से आंका है। सभी ओर से शोषण के जाल में फॅसे अभावग्रस्तता में छटपटाते आदिवासी समाज के प्रति उन्होंने गहरी सहानुभूति प्रकट की है। संस्कृति तथा धार्मिक रीति – रिवाजों का पर्याप्त चित्रण संजीव ने किया है जिसमें लोककथा, बजलबटकुच कथा, जनीशिकार, विवाह संस्कार, मुंडन संस्कार, मेला, लोकगीत, जागरगीत प्रेमगीत और पारंपरित गीत आदि। विवेच्य कथा – साहित्य में चित्रित नारी पूॅजीपतियों का शिकार अवश्य हुई है लेकिन वह पूॅजीपतियों, धर्मगुरू तथा व्यवस्था के खिलाफ प्रतिरोध करने वाली दृष्टिगोचर होती है।

संदर्भ

1) सं. रामचंद्र वर्मा– मानक हिंदी कोश, पहला खंड, पृष्ठ 264

2) राजीवलोचन शर्मा – भारत के जनजातियॉ, पृष्ठ 90

3) संजीव – महामारी, पृष्ठ 26. 27

4) किसनगढ के अहेरी – संजीव

5) पॉव तले की दूब– संजीव

6) 'सावधान! नीचे आग है' – संजीव

7) कथाकार संजीव – गिरीश काशिद

8) सामाजिक यथार्थ और कथाकार संजीव – डॉ. शहाजहान मणेर

9) 'जंगल जहॉ शुरू होता है– संजीव

10) सर्कस – संजीव

11) 'धार – संजीव

12) संत्र श्री नवल जी – नालन्दा विशाल शब्दसागर, पृष्ठ 1135

13) अनूप शुक्ल – आकांक्ष और यथार्थ, पृष्ठ 33

14) डॉ. त्रिभूजन सिंह – हिंदी उपन्यास और यथार्थवाद पृष्ठ 44

चतुर्थ अध्याय

संजीव के उपन्यासों में नारी जीवन तथा आदिवासी समाज

संजीव ने विवेच्य कथा – साहित्य में आदिवासी समाज जीवन का यथार्थ अंकन किया है। 'धार' उपन्यास में संथाल जनजाति का जीवन चित्रित है। संथाल परगना और छोटा नागपूर के आदिवासी अंचल में यह जनजाति रहती है। संथाल जाति दो वक्त की रोटी और रोजी के लिए संघर्ष करती हुई दृष्टिगोचर होती है। तेजाब कारखाने से खेतीबाड़ी, कुआँ तथा तालाब खराब हो गए है। संथालों के खेत बंजर बन गए हैं। उपन्यास की नायिका आदिवासी मैना की माँ गुलगुलिया याने जयरापेशा है तो मैना का बाप संथाल जनजाति का है। आदिवासी समाज जीवन में रीतिरिवाजों एवं अद्‌भुत लोकाचार और अंधश्रध्दा को बहुत ही महत्व दिया जाता है। यहाँ भ्रष्ट होते ही आदमी का श्राध्द कर देते हैं। मैना अपना पति होते हुए भी अन्य पुरूष (मंगर) के साथ रहती है। जिसके बारे में लेखक लिखते है– ''चबुतरे पर संथालों की परंपरा के अनुसार कुलटा मैना का श्राध्द हो रहा था।'' इससे स्पष्ट होता है कि आदिवासियों के जीवन में अद्‌भूत लोकाचार को महत्व दिया जाता है। बर्बर कुप्रथाओं का प्रचलन आदिवासी जीवन में दृष्टिगोचर होता है। ओझा द्वारा किसी नारी को डायन घोषित करने पर आदिवासी उस नारी को पत्थर मारकर जान से मार देते हैं।

'पॉव तले की दूब' उपन्यास में मंगरी आदिवासी बॉझ औरत को डायन मानकर जान से मार दिया जाता है। आदिवासी समाज जीवन में बर्बर कुप्रथाओं का प्रचलन परिलक्षित होता है। आदिवासी समाज की जीवन अज्ञान, अंधश्रध्दा तथा अरणयप्रिय संस्कृतिक के कारण दयनीय तथा अभावग्रस्त परिलक्षित होता है। रोजी –रोटी का इंतजाम न होने से आदिवासी जीविकापार्जन के लिए कोई भी काम करते हैं। 'धार' उपन्यास में परेमालूला गरीबी, शोषण से तंग आकर भाई को मंगर द्वारा पत्र लिखवाता है– ''धंधा पानी हिया पे ठीक नई! टब हमरा गाव भ्खिमंगा हो गया है... हिंया भीख और पुलिस का दलाली छोड़ के कोई धंधा नहीं!कृसीलतोड़ी... चोरी से कोइला काटने का लेकिन पकड़ाये तो खैर नहीं। कोई नहीं बचाने आयेया।'' इस कथन से विदित होता है कि आदिवासी समाज का जीवन गरीबी,

बेकारी तथा दयनीय अवस्था में बितता हुआ परिलक्षित होता है। कुछ आदिवासियों की जातियॉ – कोयला खदान, कारखाने में मज़दूरी करके जीविकोपार्जन करती है। कुछ आदिवासी जीविकोपार्जन के लिए बगुलें, सारस, मैनाएँ तथा लोमड़ी का शिकार करते हैं। विवेच्य कथा – साहितय में आदिवासी समाज में पंचायत, अंधश्रध्दा, जादू–टोना, बर्बर प्रथा, भोज उत्सव तथा जानगुरू ओझा को अधिक महत्त्व दिया जाता हैं। 'पॉव तले दूब' उपन्यास में आदिवासियों की जमीन पर कारखाना शुरू कर देने से आदिवासी विस्थापित होते है। मटके में भात की शराब पीकर तथा उत्सवधर्मिता के कारण आदिवासी कंगाल बने हुए है। सुविधा का अभाव के कारण ज्यादातर लोग बीमारी से मर जाते है। साथ ही वे पानी व्यवस्था तथा समय पर अनाज न मिलने से कुपोषण में जीते हैं। जीते है। आदिवासी लोग, जड़ी –बुटी इकट्ठा कर बेचते हैं, सब्जी बेचते हैं, कुछ काम नही ंतो भीख मॉगकर, या चोरी से कोयला काटकर जीविकोपार्जन करते है।

'महामारी' कहानी में आदिवासी जीवन गरीबी एवं भूख से पीड़ित दृश्टिगोचर होता है। लेखक आदिवासी जीवन का यथार्ाि चित्रण करते हुए लिखते हैं – ''रंगई–बहू उसकी तीन संतानोंकृअक्सर पोखर के कीचड़ में सने हुए बच्चे मछलियॉ पकड़ा करते और बाग में पत्तियॉ जलाकर उन्हें भूनकर खाया करते।''[12] इस कथन से विदित होता है कि आदिवासी का जीवन गरीबी तथा दो वक्त की रोटी की तलाश में बितता है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि आदिवासी समाज का जीवन गरीबी, आर्थिक अभाव और रोजी – रोटी का चिंता में बितता है। आदिवासी समाज उत्सवधर्मी तथा अद्भूत लोकाचार, अंधश्रध्दालू होने के कारण सभ्यता की दृष्टि से पिछड़ा हुआ है। स्पष्ट है कि आदिवासी समाज प्रायः निम्नस्तर का जीवन जीता है।

आदिवासी समाज का शोषण

आदिवासी समाज भारत में विभिन्न क्षेत्रों मे विभिन्न रूपों में बॅटा हुआ है। आदिकाल से यह समाज अनपढ़ अज्ञानी एवं सभ्यता से दूर पहाड़ों, जंगलों में रहकर जीविकोपार्जन कर रहा है। आज अनेक जनजातियों जीविकोपार्जन के लिए

कारखानों में, खदानों में मज़दूरी कर रही है। उनकी मज़बूरी का, गरीबी का फायदा उठाकर पूँजीपति करता जा रहा है। आदिवासी जानवरों से बदतर जीवन जी रहे है। पूँजीपति निरंतर अन्य वर्गो का शोषण करने से अमीर बन रहा है। विवेच्य कथा–साहित्य में आदिवासी समाज का शोषण कारखाना –मालिक, खदान –मालिक, सेठ, ठेकदार, ठाकुर, दलाल पुलिस, नेता, भ्रष्ट अफसर तथा डाकू द्वारा खुले आम हो रहा है। शोषण से आदिवासियों का जीवन दयनीय बन गया है, जिसका विवेचन –विश्लेषण यहॉ प्रस्तुत है–

पूँजीपतियों द्वारा आदिवासी शोषण

पूँजीपति धन के बल पर गरीब, अज्ञानी तथा निर्धन आदिवासियों का शोषण कर धनवान बनते जा रहे हैं। इस संदर्भ में डॉ॰ केशवदेव शर्मा लिखते है– ''वर्तमान समय में शोषण समाप्त होने के बजाय बढ़ता रहा है। दिनोंदिन गरीबों की नृशंस हत्या आर्थिक शोषण, शिक्षितों में बेकारी ... एक पूँजीपति निरंतर प्रगति करता जा रहा है। वह निम्न वर्ग की अपनी पूरी क्षमता से शोषण करने में तल्लीन है।''[13] उपरोक्त कथन से विदित होता है कि पूँजीपति निरंतर शोषण करते हुए प्रगति करते जा रहे हैं जब कि आदिवासी एवं शोषित समाज अत्यधिक दयनीय बनते जा रहे हैं। इस कारण समाज में वैषम्य निर्माण हुआ है।

पूँजीपति मज़दूरों की आर्थिकता एवं उनकी दयनीयता पर सहानभुतिपूर्वक नहीं सोचते, अपने स्वार्थ की सिध्दि के लिए मजदूरों की हत्या भी करवाते है। सावधान! नीच आग है' उपन्यास में आदिवासी मजूदर कोयला खदान में काम करते है। खदान में काम करते समय संभाव्य खदान दुर्घटना की सूचना मज़दूर खदान मालिक को देते है। मज़दूर अपनी जिंदगी खतरे में डालकर खदान में काम करते है। खदान से होनेवाली खतरे की जानकारी बार–बार देने पर भी खदान मालिक बेफिक्र रहता है। अपनी मनमानी करता है। खदान में बोअर होल से पानी फूट आता है। जान बचाने के लिए मज़दूर भागते है। पानी का जोर बढ़ता है। सामने आयी मौत को देखकर आदिवासी मज़दूर सोमारू कहता है– ''स्सली, हम बोलते रह गये कि काम नहीं करेंगे, नहीं करेंगे इत्ता पानी निकल रहा है, मगर साले ने

गुल्ली की ठॅसनी दिलवा ही दी और चमचे पाठक राम..? क्या मिला तुमको चमचागिरी करके....? खुद तो गये ही ले ये गये हजार और भी बेकसूर आदिमियों को।''[14] इस कथन से विदित होता है कि पूॅजीपति धन की लालसा में इतने अंधे हुए हैं कि उन्हें मज़दूरों की जिंदगी से कोई सारोकार नहीं है। खदान में बोअरहोल से पानी आने से हजारों मज़दूर डूबकर मर जाते है। पूॅजीपति इस प्रकार मज़दूरों की हत्या भी करते है।

'धार' उपन्यास के पूॅजीपति महेन्द्ररबाबू आदिवासियों की जमीन पर तेजाब का कारखाना शुरू करते है। तेजाब के कारखाने में आदिवासी मजदूरों को काम दिया जाता है। तेजाब कारखाने से आदिवासियों की खेती तथा जीवन पर परिणाम होता है। तेजाब के पानी से खेत, पेडत्र और तालाब सूख जाते हैं। खेती में काम नहीं होने से उपन्यास की नायिका मैना कहती है। ''खेत खतार, पेड़, रूख, कूऑ, तालाब, हम और हमरा बाल –बच्चा तक आज तेजाब में गल रआ है, भूख से जल रआ है।''[15] इस कथन से विदित होता है कि पूॅजीपति धन कमाने के स्वार्थ में आदिवासियों की जमीन तथा जिंदगी भी बरबाद करते है। इतना ही नहीं तेजाब कारखाने में काम करने वाले मजदूरों को उनकी मजदूरी का दाम मिलता नहीं है। कारखाने में काम करने वाला मजदूर अपना दर्द बताता हैं– चार चार महीना का तनखाह रोक के रखा, पूरा बॉसगड़ा में जहर घोल दिया, सबको लंगड़ा लूला, अपाहिज और रोगी बना दिया।''[16] स्पष्ट है कि पूॅजीपति अपने शोषण तंत्र से आदिवाससियों का आर्थिक एवं शारीरिक शोषण करते हैं।

आदिवासी अनपढ़ तथा अज्ञानी होने के कारण उनकी असहायता का लाभ पूॅजीपति उठाते हैं। 'टीस' कहानी में पूॅजीपति अपनी सुविधा तथा मुनाफा कमाने के लिए आदिवासियों के बस्ती में खदाने शुरू करने से अनेक आदिवासी विस्थापित होते हैं। लेखक खिलते हैं कि ''कौलियारी के मालिक ने बस्ती के पास ... एक खुली खदान शुरू कर दी थी, जो बस्ती की छाती पर एक बड़े घाव की तरह दिनोंदिन गहरी और बड़ी होती गयी थी और जिसकी निकाली गयी मिट्टी और पत्थरों के ढू हके जबड़े में समाते गये थे संथालों के खेल।''[17] प्रस्तुत कथन से यह विदित होता है। कि पूॅजीपति धन की लालसा में संथाल आदिवासियों की जमीन

पर खदान शुरू कर उन्हें विस्थापित करते हैं। इस प्रकार पूँजीपति आदिवासियों का आर्थिक, शारीरिक और मानसिक शोषण करते हैं।

निष्कर्षतः कहना सही होगा कि पूँजीपति आदिवासियों का आर्थिक शोषण करते है तथा उनकी जमीन पर कब्जा कर उन्हें विस्थापित करते हैं।

ठेकेदारों द्वारा आदिवासी शोषण

स्रकार की और से अलग –अलग कामों के लिए जैसे वन–विभाग, सड़क विभाग, खदान से कोयला निकालना, नहर तालाब बनाने आदि के लिए ठेकेदार ठेका लेते हैं। ठेकेदार यह काम आदिवासियों के द्वारा करवाते हैं। आदिवासी गरीबी में मजबुरी से दयनीय जीवन जीते हुए ठेकेदार के पास कामर करते है। तब उन्हें दो वक्त की रोटी नसीब होती है। आदिवासी जब अपने काम की मजदूरी ठेकेदार के पास मॉगते है तब उन्हें डराया जाता है, धमकाया जाता है, उन्हें परिश्रमिक नहीं दिया जाता। 'उपन्यास में थारू जनजाति का युवक काली एक महीना नहर पर काम करता है। महीने के बाद काम का परिश्रमिक ठेकेदार के पास मॉगता है तब काली को ठेकेदार द्वारा टरकाया जाता है। काली को पैसों की बहुत ही जरूरत होने से वह जिद कर बैठता है तब काली का अपमान किया जाता है। कथा–नायक कहता है– ''ठेकेदार ने हाथ ही छोड़ दिया उस पर। किसी ने भी उसका साथ न दिया। उलटे सेठ उसी को भला –बुरा कहने लगा, उसे ही माफी मॉगली पड़ी। इतनी हतक।''[18] इस कथन से विदित होता है कि ठेकेदार आदिवासियों का आर्थिक शोषण तो करते ही है उसके साथ शारीरिक अत्याचार भी करते हैं।

'धार' उपन्यास में ठेकेदार अवैध कोयला खनन आदिवासियों से करवाते हैं। ठेकेदार के डर से आदिवासी कुछ भी काम करके जीविकोपार्जन करते हैं। ठेकेदार के पास काम करने वाला संथाल आदिवासी फोकल अवैध कोयला खनन करते समय जीवन धसने से मिट्टी का एक बड़ा खण्ड फोकल पर गिर जाता है। फोकल उसमें अटक जाता है। वह कराहने लगता है। ठेकेदार से मदद की याचना करता है तक ठेकेदार फोकल को देखकर कहता है – ''अरे मार दे। अभी जिन्दा ही है

साला मार के भ दें नून सब जगह।''[19] इस कथन से विदित होता है कि ठेकेदार निर्दयी तथा स्वार्थी होते हैं। मुसीबत के समय मजदूर का साथ नहीं देते हैं।

'जीवन के पार' कहानी में हो जनजाति का युवक मानसिंह बामई से शादी करना चाहता है। ज बवह बामई के बा पके पास शादी के बारे में बताता है तब बामई का बाप पॉच सौ रूप्ये जमा करने के लिए कहता है। पॉच सौ रूप्ये का मूल्य जमा करने के लिए मानसिंह वन विभाग –सड़क विभाग आदि ठेकेदारों के पास महीनों काम करता है। लेकिन वह पॉच सौ रूपये जमा नहीं कर पाता। लेखक लिखते हैं कि ''ठेकेदार मजूरों का पैसा हड़पने में एक नम्बर का शैतान।''[20] जब मानसिंह को ठेकेदार मजूरों का पैसे हड़पने में एक नम्बर का शैतान।''[20] जब मानसिंह को ठेकेदार के यहू से काम के पैसे नहीं मिलते त बह अपनी होने वाली पत्नी बामई को कहता है – ''यहॉ। दिकू लोगों का राज है। वे ही ठीकेदार, वे ही हाकिम। देखती नहीं कितना पैसा मार लिया इन लोगों ने मेरा।''[21] इस कथन से विदित होता है कि ठेकेदार आदिवासियों का शोषण करते हैं। उन्हें मज़दूरी के पैसे नहीं मिलते।

निष्कर्षतः कहना सही होगा कि विवेच्य कथा –साहित्य में ठेकेदार द्वारा आदिवासियों का पर्याप्त मात्रा में शोषण होता है। ठेकेदार अनपढ़ आदिवासियों के अज्ञान का लाभ उठाकर उनका आर्थिक शोषण करते है। वे उन्हें किए हुए काम का पारिश्रमिक नहीं देते। ठेकेदार की वजह से आदिवासी दयनीय जिंदगी जी रहे हैं।

भ्रष्ट अधिकारियों द्वारा आदिवासी शोषण

आदिवासियों की कुछ जनजातियॉ जंगल संस्कृति से बाहर आकर शहरी संस्कृति के संपर्क में आने से कोयला खदान से, लोह कारखाने में तथा जड़ी –बुटी, सब्जी बेचकर अपनी जीविकोपार्जन कर रही है। उनका निश्चित काम –काज न होने से गरीबी और दयनीय अवस्था में जीते हैं। सरकारी तथा गैरसरकारी विभागों में भ्रष्ट अधिकारी आदिवासियों का आर्थिक शोषण कर उन्हें और भी कंगाल बनाते हैं। भ्रष्टाचार के बार में डॉ. चमनलाल गुप्तो की टिप्पणी द्रष्टव्य है – '' भ्रष्टाचार का अर्थ अपने पद अथवा शक्ति के दबाव में अनुचित काम

करवाना, सत्ता एवं समार्थ्य का दुरूपयोग करवाना।''[22] प्रस्तुत कथन से स्पष्ट होता है कि अधिकारी अपने पद का दुरूप्योग करके रिश्वत लेकर अनुचित काम करते हैं तथा अनैतिकता का बढ़ावा देते हैं।

'पॉव तले की दूब' उपन्यास में झारखं डमें स्थित आदिवासियों का चित्रण हुआ है। यहॉ यहॉ उ़द्योगपति नए –नए उ़द्योग शुरू करने के लिए आदिवासियों की जमीन पर कारखाने शुरू करते है। जिनकी जमीन पर ये कारखाने शुरू होते हैं, उन्हें टोटली डिप्राइव किया जाता है। कथा – नायक भ्रष्ट अधिकारियों द्वारा आदिवासियों के शोषण को देखकर कहता है – ''उन्हें जमीन से भी से बेदखल किया जा रहा है, मुआवजा भी अफसरों के पेट में।''[23] इससे स्पष्ट होता है कि भ्रष्ट अधिकारीआदिवासियों का आर्थिक शोषण कर उन्हें कंगाल बनाते है।

'दुनिया की सबसे हसीन औरत' कहानी में ओरॉव जनजाति की अनपढ़ गरीब औरत सब्जी बेचकर अपनी जीविकोपार्जन करती है। आदिवासी औरत रेल से सब्जी लेकर जाते समय रेले मे टी.टी. साहिबा मुलियों को उलट –पलट कर कहती है– ''अरे फूलगोभी या टमाटर – या टमाटर नहीं हैं?''[24] टी.टी साहिबा को मनपसंद सब्जी मुक्त में मिलती नही ंतब वह कहती है– ''देखो, हमारी गाड़ी में चढो तो अच्छी सब्जियॉ लेकर वरना दूसरी गाड़ी देखो।''[25] आदिवासी औरत टिकट दिखलाती है तब टी.टी. साहिबा मुलियों का किराया रिश्वत के रूप में मॉगती है। औरत रिश्वत के रूप में दस रूपये देने में असमर्थ देखकर टी.टी. साहिबा कहती है– ''वे सब हम नहीं जानते निकाल कर रखो दस नही ंतो उतर जाओं।''[26] तभी उस औरत के पास रेल्वे पुलिस के दो जवान आते हैं लेखक लिखते है '' उन्होंने बिन कुछ पूछे चुन–चुनकर मुट्ठीभर मूलियॉ उठा ली।''[27] इस कथन से विदित होता है कि अधिकारी अपने अधिकार का दुरूप्योग कर आदिवासियों से रिश्वत लेकर उनका शोषण करते हैं।

'आप यहॉ है' कहानी में आदिवासी औरत हिदिया सरकारी अधिकारी वर्मा साहब के घर में नौकरानी का काम करती है। हिदिया शिलवा गॉव से रेल्वे स्टेशन पर आकर पैदल आधा घंटा चलते हुए वर्मा साहब के घर आती है। हिदिया हर

रोज कमरों की सफाई करती है। मिसेज वर्मा घर में नहीं थी तभी हिदिया कॉच की खिड़की छोटे पड़कर धुंधली हो जाने से साफ कर रही थी तभी वर्मा साहब उससे जबर्दस्ती करे है। लेखक लिखते है।– लेखक लिखते है। – ''नहीं बाबू,!कृहाथ पॉव उसी मूर्च्छना में छटपटाये, कॉच की दीवार के पार हाथ उठ –उठकर टूट रहे थेकृ वर्मा साहब के पंजों की खरोंच को झेलते हुए कसी तरह कपाट खोलकर अस्त व्यस्त बाहर आ गयी हिदिया।''[28] इस कथन से विदित होता है कि भ्रष्ट अधिकारी आदिवासियों पर अत्याचार कर उनका शोषण करते हैं।

उपर्युक्त विवेचन– विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि संजीव ने भ्रष्ट अधिकारियों की अमनावतीय नीति पर प्रकाशन डालते हुए आदिवासियों की दयनीय तिलमिलाहट को स्पष्ट किया हैं।

पुलिस द्वारा आदिवासी शोषण

शोषण का स्वरूप जहॉ रिश्वत के रूप में है तो शोषण का दूसरा स्वरूप अत्याचार है। य़द्यपि आर्थिक शोषण भी अत्याचार ही है। यहॉ अत्याचार से तात्पर्य शारीरिक यातना, गाली गलीज, जॉच के नाम पर अत्याचार करना, झूठे इल्जाम में फॅसाकर जेल में बंद करना तथा बलात्कार करना आदि से है। पुलिस का कर्तव्य देश में सुरक्षा व्यवस्था रखना है। इसके लिए पुलिस डाकू, लुटेरों एवं हिंसा करने वाले अपराधियों की धरपकड़ करना, समाज में शांति बनाये रखना आदि विविध कार्य करने पड़ते हैं। पुलिस जनता की रक्षक है क्योंकि जनसामान्य के जीवन तथा धन – संपत्ति की सुरक्षा पुलिस ही करती है।

पुलिस की भूमिका के बारे में बी.एम. शर्मा लिखते हैं – कल्याणकारी राज्य में पुलिस की भूमिका एक समाजसेवी संगठन की होती है। उसे कानून तथा व्यवस्था बनाए रखने तथा अपराधों की रोकथाम करने वाली बुनियादी भूमिका निभानी होती है।''[29] इस कथन से विदित होता है कि पुलिस की भूमिका समाजसेवक जैसी होती है। वैसे पुलिस का कार्य बहुआयामी है – कानून तोड़ने वाले को सजा दिलवाना, संकट में फॅसे नागरिक को मद्द करना, गैरकानूनी तरीकों से चल रहे धंधों की रोकथाम करना, समाज में शांति बनाये रखना आदि है। लेकिन

वर्तमान स्थिति में पुलिस के व्यवहार तथा भ्रष्टाचार के रूप को देखने पर आम आदमी अपनी शिकायत लेकर पुलिस थाने में जाने से डरता है। चोर, गैरकानूनी काम करने वालों से पुलिस की मिलीभगत होने से आम आदमी का पुलिस से भरोसा उठ गया है। विवेच्य कथा – साहित्य में पुलिस द्वारा आदिवासियों के शोषण एवं अत्याचर का यहॉ विस्तार से विवेचन प्रस्तुत है–

'जंगल जहॉ शुरू होता है' उपन्यास में 'थारू' जनजाति का युवक बिसराम के घर पुलिस तलाशी लेने आती है। बिसराम ने कोई भी अपराध नहीं किया है, उसकी गलती यह है कि वह डाकू काली का भाई है। पुलिस का दहशत –भरी भाषा का, उनके व्यवहार का इस कथन से पता चलता है– ''कहॉ छुपा रखा है उस मादरचोद कालिया को? ... चोप साला। अगवार पिछवाड़ सर्च करो। न मिले तो एक एक घर छान मानो। जाएगा कहॉ साला।''[30] पुलिस के अत्याचार के डर से गॉव में कोहराम मच जाता है। पुलिस का आतंक इतना है कि गॉव में पुलिस आने की खबर सुनते हैं तो डाकू आने जैसा लगता है। जिससे भागते बना, खेतों में भाग गया। लेखक कहते है– ''सत्रह घरों का चप्पा –चप्पा छाना जा रहा था। उधर थानेदार के लात –घूसों और बेंत की छड़ी की मार से हलाल किए जा रहे बकरे की तरह अलला रहे थे बिसराम, बिसराम बहू और उनकी दुधमुॅही बच्ची।''[31] उपरोक्त उध्दरण से यह विदित होता है कि पुलिस का तलाशी के नाम पर जबर्दस्ती करना, गाली –गलौज, मारपीट करना, यह भी शोषण है। निर्दोष बिसराम की पत्नी को पुलिस पकड़कर थाने में ले जाती है। पुलिस का शक है कि बिसराम की पत्नी डाकू की मदद करती है। इस कारण से थाने में उस पर अत्याचार करते है। बिसराम बहु आपबीती बयान करती है– ''ऊ गाली दिया। चुपचाप सुनते रहे । फिर बोला तुम काहे आरए, तुमरा जवान लड़की नहीं है?.. ऊ बोले, जाओ, भेज दो।.... बहोत मारा, बहो –त । अब हम किसी काम के नहीं रह गए नॅय बचेंगे हम।''[32] इस कथन से विदित होता है कि पुलिस नारी पर भी अत्याचार करती है। उसका शारीरिक तथा मानसिक शोषण करती है। आदिवासी अनपढ़ तथा अरण्य में रहने से वे पुलिस, डाकू तथा जमींदारों के शोषण तंत्र में फंस जाते है।

'जंगल जहॉ शुरू होता है' उपन्यास में थारू जनजाति के लोगों का जमींदार शोषण करते है। डाकू इन्हें हथियार और सहयोग प्राप्त करने के साधन के रूप में इस्तेमाल करते है और पुलिस इन्हें डाकुओं से मिला हुआ समझकर इनकी खोज–खबर पाने के लिए इन पर अत्याचार करती है। 'मलारी' को इसी शक के आधार पर पुलिस पकड़ती है तब वह अपनी मजबूरी बताती है।, ''हाकिम! हमरा कसूरबस इतना है कि गरीब है, औरत जात है, जो ही आता है डरा–धमका के जबरदस्ती करने को मगजूर (मजबूर) करता है।''[33] मलारी की याचना, मजबुरी तथा दर्द का परिणाम पुलिस पर नहीं होता। एक अबला नारी के साथ पुलिस के व्यवहार का अंकन लेखक ने इन शब्दों में किया है– ''सहसा सुदर्शनसिंह का चौड़ा हाथ उसके मुॅह पर पड़ा और वह खाट पर सीधे जा भहराई। प्रेम प्रकाश ने सीधे राइफल तान ली, बोल भोंसडी। रंडी, कुतिया...। बोल, मादरचोद।... नही ंतो ई राइफल तेरे पेट में डाल देंगे।''[34] इससे स्पष्ट होता है कि पुलिस का जनता के साथ व्यवहार कितना असभ्य और अमानुष होता है इस पर प्रकाश डाला है।

आदिवासी पर अत्याचार जेल में भी होते हैं, जेल मे वह सुरक्षित नहीं है। 'धार' उपन्यास की नायिका जेल में सजा काटकर जब रिहा होती है तब वह स्वयं पर जेल में हुए अत्याचार की जानकारी मंगर से देती है– ''जेल में जेलर हमरा साथ जबर्दस्ती किया, उसी खातिर बच्चा उसका मुॅह पे मार हे हम चला आया।''[35] इस कथन से विदित होता है कि मैना पर जेल अधिकारी बलात्कार करता है जिससे मैना को संतान होती है। अतः स्पष्ट है कि पुलिस आदिवासियों के साथ बर्बरता का आचरण करती है।

पुलिस अपराधी से सच उगलवाने के लिए उस पर शारीरिक अत्याचार भी करती है।अगर वह अपराधी न भी हो तो भी पुलिस के आतंक से डरकर अपराध कबुल करता ही है। अपराधी रामजतन नोनिया को पुलिस पकड़ती है जब पुलिस अफसर पांडे उससे कुछ जानना चाहते है तब वे सिपाहियों से कहते हैं– उसके नाखून उखड़वाओ एक –एक कर।''[36] कथा नायक कहता है – ''चार सिपाहियों ने नौनिया को दबोच रखा था, उन्होंने सॅड़सी को बेरहमी से अंदर तक खुभोकर जोर से खींचा और एक चीत्कार के साथ जिंदा रक्तरंजित नाखून सॅड़सी की चोंच में

था। अँगूठे से पिलपिलाकर लाल खून बह रहा था।''[37] इस कथन से विदित होता है कि पुलिस अपने अधिकार का दुरूप्योग कर अपराधियों पर अत्याचार करती है।

पुलिस खौफ से पीड़ित आदिवासी

पुलिस की भूमिका एक समाजसेवी संगठन जैसी होती है। लेकिन आज पुलिस की भूमिका बदली हुई दृष्टिगोचर होती है। पुलिस के बर्बरतापूर्ण आचरण से आम जनता में खौफ निर्माण हुआ है। आदिवासियों के साथ पुलिस बर्बरतापूर्ण आचरण करती है। इस शोषण तथा अत्याचार वृत्ति का संजीव ने अपने कथा साहित्य में वास्तविक चित्रण किया है। जिसका विवेचन यहॉ प्रस्तुत है –

'धार' उपन्यास में आदिवासी अपनी जीविकोपार्जन के लिए सरकारी जगह से अवैध कोयला निकालते है। उपन्यास की नायिका मैना तथा उसका पति कोयला निकाल कर बेच देत है। मंगर के रिक्शा पर ठेले ले जाते समय पुलिस के जवान उसकी निर्दयता से पिटाई करते है। मंगर जबह किए जा रहे बकरे की तरह तड़पता है। पुलिस की मंगर से मारपीट देखकर मैना पुलिस से कहती है– ''पैसा तो पहुॅचाया था साहेब।''[38] तब पुलिस अपने रौब में कहती है – ''पकड़ के बन्द कर दे हरामजादी की।... कम से कम सौ पूरा कर।''[39] रिश्वत की रकम देने के लिए रात के समय पुलिस के खौफ से मंगर पुलिस थाना नहीं जाता। विरानी रात के समय मैना पुलिस थाना जाने लगती है। तब मैना महसुस करती है। ''इत्ती रात को अकेले थाना जाना मरघट जाने से भी ज्यादा भयावना है।''[40] इससे स्पष्ट होता है कि आदिवासी पुलिस के खौफ से पीडित है।

'जंगल जहॉ शुरू होता है' उपन्यास में थारू आदिवासी लोग हर पल पुलिस के खौफ से जिंदगी बिताते है। आदिवासियों की गलती कुछ भी न हो लेकिन पुलिस निर्दोश आदिवासियों को पकड़कर उन पर अत्याचार करती है। बिसराम की लड़की की मौत होने पर उसका अंतिम संस्कार पुलिस के खौफ में होता है। बिसराम की पत्नी बेटी की मौत पर रोती है तब इनरदेव कहता है– ''जल्दी –जल्दी नहा लो। हियॉ रूकना ठीक नहीं। पुलिस को शक होगा। सबको पकड़वाएगी का?''[41] इस कथन से विदित होता है कि जंगल में अंधेरी रात में एक

मॉ बेटी की मौत पर पुलिस खौफ से रो नहीं सकती। बेटी का अंतिम क्रिया कर्म जल्दीबाजी में करना पड़ता है।

पुलिस का खौफ हर पल साये की तरह आदिवासियों का पीछा करता है। पुलिस कभी भी आकार आदिवासियों को पकड़कर मारपीट करती है। पुलिस के डर से अनेक थारू आदिवासी गॉव छोडकर भाग जाते है। मलारी पुलिस के डर से गॉव छोड़कर भटकती फिरती है। जब वह काली से मिलती है तब पुलिस के खौफ से हुई आदिवासियों की हालत बताती है –''समसे गॉव उजड़ गया। हमस ब जान ले के भागे फिर रहे है। रोज –रोजका अतियाचार, जुलुम''[42] पुलिस के खौफ से आदिवासी इतने परेशान है कि वे पुलिस पर नहीं डाकू पर भरोसा रखते है। मलारी काली से कहती है– ''डाकू का विष्वास कर लेना, लेकिन किसी हाकिम का विश्वास मत करना।''[43] इस कथन से विदित होता है कि पुलिस से आदिवासियों के प्राण का भय होने से वे डाकू पर भरोसा करते है।

पुलिस द्वारा फर्जी एनकाउंटर कराना

पुलिस विभाग में अपराधों की रोकथाम के लिए तथा अपराधियों की धरपकड़ के लिए पुलिस अपराध विरोधी अभियानद ल स्थापित करती है जिसका उद्देश्य डाकू, आतंकवादी, नक्सली, स्मगलर, आदि को पकड़ना होता है। पुलिस के साथ किसी बदमाश की मुठभेड़ होती है तब पुलिस उस बदमाश को आत्मसमर्पण करने के लिए कहती है। अगर वह पुलिस का आदेश न मानते हुए पुलिस को प्रतिरोध करता है तब पुलिस सुरक्षा के लिए बदमाश के पैरों पर गोली चलाकर उसे घायल करती है या बदमाश के साथ मुठभेड़ होती है और पुलिस के गोली से बदमाश मारा जाता है। तब उसे एनकाउंटर कहा जाता है। लेकिन वर्तमान स्थिति में पुलिस और अपराधी की मुठभेड न होते हुए भी पुलिस फर्जी एनकाउंटर कराके उस अपराधी को मुठभेडत्र में मारा घोशित करती है। इस संदर्भ में मानव अधिकार आयोगके सामने अनेक शिकायतें की गई है। अनेक पुलिस अफसरों को कठघरे में खडा किया गया है। पुलिस के इस प्रकार के व्यवहार पर प्रश्न –चिह लगये गए है।

विवेच्य कथा – साहित्य में पुलिस के बर्बरतापूर्ण आचरण का विवेचन यहॉ प्रस्तुत है।

जंगल जहॉ शुरू होता है' उपन्यास में थारू आदिवासी युवक बिसराम को पुलिस थाने में ले जाती है। निरपराधी बिसराम को पुलिस इतनी मारपीट करती है कि वह घायल होता है। घायल बिसराम को अस्पताल में भर्ती किया जाता है। बनकटा क्षेत्र पुलिस अफसर पांडयेजी के कंट्रोल में आता है। बिसराम का भाई काली और उसके गिरोह को डर इस बात का है कि बिसराम को फर्जी एनकाउंटर में मार दिया जायेगा इसी चिंता में डुबे हुए काली को इब्राहिम चाचा भर्रास कंठ से बताते हैं – आज जेल में ही एनकाउंटर कर डाला। मार डाला बिसराम भाई को। रात दू बजै टैम, बोले जेल का चहारदीवारी फॉद के भाग रहा था। वो बेचारा चल भी नहीं पर रहा थाकृलेकिन पुलिस और गौरमेंट के लोग जो बोले वही सच है।''[44] इस कथन से विदित होता है कि पुलिस अपने अधिकार का गैरजिम्मेदाराना इस्तेमाल कर फर्जी एनकाउंटर करती है। यह हत्या ही है लेकिन अपने अधिकार के आड़ में इस एनकाउंटर प्रकट रूप से मानती है। यहॉ पुलिस का बर्बर रूप लेखक ने बताया है। डाक गिरोह के लिए काम करने वाला श्यामदेव पुलिस की पकड़ में आता है। तब पुलिस उससे पूछती है 'तुम्हारी कोई इच्छा हो तो बता दो।' तब श्यामदेव अपने बेटे भेंट करने की इच्छा प्रकट करता है, बेटे से मिलने पर पुलिस श्यामदेव को घन जंगल में ले जाती है। सुनसान अमुर्त जंगल। चार बज रहे थे। कथा नायक कहता है – ''श्यामदेव के सारे बंधन खोल दिए गए हैं– वह घायल पशु – सा लडखड़ा रहा है। श्यामदवे पर फायर कौन करेना –इस मुद्दे को लेकर जवानों में होड़ सी लग गई है। जैसे यह कोई मौत का नहीं, उत्सव का माहॉल हो। सभी चाहते है कि श्यामदेव उसीकी गोली से सारा जाए.. कुमार इन्स्पेक्टर राम को इशारा करता है और टार्च श्यामदेव पर फोकस हो जाती है। .... धॉय। .... धॉय । दूसरी गोली श्यामदेव क पेट में ...धॉय । तीसरी गोली में गिरकर ठंडा हो जाता है श्यामदेव।''[45] उपरोक्त उध्दरण से यह विदित होता है कि पुलिस आदिवासियों के साथ बर्बरतापूर्ण अमानवीय आचरण कर उनकी हत्या करती है। लेखक ने यहॉ पुलिस अपने अधिकार का दुरूप्योग किस प्रकार करती है इस पर प्रकाश डाला है।

उपर्युक्त विवेचन के पश्चात् कहा जा सकता है कि विवेच्य कथा – साहित्य में 'जंगल जहॉ शुरू होता है' तथा 'धार' जैसे उपन्यासों में पुलिस द्वारा तथा उच्च वर्ग द्वारा आदिवासी शोषण का चित्रण अधिक मात्रा में मिलता है। आदिवासी पुलिस के शोषण एवं खौफ से जानवरों से बदतर जिंदगी बीता रहे है।

आदिवासी नारी का प्रतिरोध

विवेच्या कथा – साहित्य में आदिवासी नारी में संघर्ष – चेतना दृष्टिगोचर होती है। आदिवासी नारी गरीबी, अज्ञान, अंधश्रध्दा एवं सुख–सुविधा से वंचित घिनौनी जिंदगी जीती है पर उसके भीतर प्रखर रूप से स्वाभिमान और प्रतिरोध को चेतना परिलक्षित होती है। लेखक ने आदिवासी नारी को अन्याय –अत्याचार के खिलाफ संघर्ष करने वाली नारी के रूप में प्रस्तुत किया है।

'धार' उपन्यास की नायिका मैना में स्वाभिमान तथा संघर्ष – चेतना दिखाई देती है। मैना अपने पिता तथा पति के खिलाफ संघर्ष करती है क्योंकि मैना के पिता अपनी जमीन तेजाब फैक्टरी शुरू करने के लिए महेन्द्रबाबु को देते है। तेजाब फैक्टरी के पानी से तालाब तथा कुऍ का पानी दूषित होती है। जमीन बंजर बनती है आदिवासी बीमार पड़ते हैं तब मैना गॉव वालों को साथ में लेकर आंदोलन करती है – ''मैना और गॉव के बाकी लोग, नारा लगा रहे थै, भाइयों, काम छोड़के निकल आवा, ऊ फैक्टरी नहीं, हम सबकी मौत है।''[46] इतना ही नहीं मैना फैक्टरी मालिक का साथ देने वाले अपने पिता तथा पति के खिलाफ संघर्ष करती है। अंत में मैना पति को त्याग देती है और मंगर के साथ रहती है। यहॉ मैना के स्वभान में स्वाभिमान तथा संघर्ष चेतना परिलक्षित होती है। तेजबा फैक्टरी से सारे गॉव का पानी दूषित होता है। पीने के लिए पानी नहीं मिलता तब गॉव में से शहर की ओर जाने वाली सरकारी पाईप को तोड़ती है। लेखक लिखते हैं – ''हथीड़ा उठा लाई और दोनों हाथों से उसने पाइप के ज्वायंट पर दे मारा। देखते ही देखते फौव्वारे की शक्ल में पानी का स्त्रोत खुल गयाकृसबने पानी पिया।[47]'' इससे स्पष्ट होता है कि मैना में संघर्ष चेतना है। मैना जमीन मालिक को पैसा देकर जमीन से कोयला निकालती है तब ठेकेदार महेन्दर बाबू मैना से कहते है– ''अब जमीन हमारी है,

हमने खरीदी है।'' और जमीन से निकाला हुआ कायेला ले जाने लगते है तब मैना स्वाभिमान से कहती है –''एक चीज एक बार बेचा जाता कि हजार बार।कृमर मर के निकाला हम, और अब हो गया तुमरा बाप का? खबरदार जो हाथ लगाया।''[48] इस कथन से विदित होता है कि मैना अन्याय – अत्याचार के खिलाफ संघर्ष करती है। यहॉ उसकी प्रतिरोध की भावना दिखाई देती है। मैना मॉ और मैना की मॉ और मैना को पंडित (ओझा) महेन्दर बाबु से रिश्वत लेकर डायन घोषित करता है। आदिवासियों में ओझा द्वारा डायन घोषित करने पर उस औरत को पत्थर मार –मार कर जान से मार जाता है या उसे गॉव से भगा दिया जाता है। मैना की मॉ को डायन मानकर मार दिया जाता है। जब मैना को पंडित डायन घोषित करता है तब मैना पंडित का असली रूप पहचानकर ओझा की गर्दन पकड़ते हुए कहती है– ''ओझा, खा जाहिर थान का कसन!.. कि तू घूस नहीं खाता है, सच बोल रआ है।''[49] प्रस्तुत कथन से स्पष्ट होते है कि आदिवासी नारी में प्रतिरोध की भावना तीव्र है।

'आप यहॉ है' कहानी में आदिवासी नारी हिदिया सरकारी अधिकारी मिस्टर वर्मा के घर नौकरानी का काम करती है। हर रोज अपने गावॅ से स्टेशन आकार वहॉ से पैदल आधा घंटा चलकर वर्मा के यहॉ आता है। हिदिया गरीब है लेकिन स्वाभिमानी है। मिस्टर वर्मा एक दिन हिदिया की इज्जत लुटते है तब हिदिया जान बचाकर भाग जाती है। मिसेस वर्मा अपने पति के कारनामों को नजर अंदाज करते हुए उल्टे हिदिया पर चोरी का झूठा आरोप पुलिस थाने में दर्ज करती है। हिदिया काम –काज न मिलने से अपने गावॅ मे रहती है। मिस्टर वर्मा मिसेज वर्मा हिदिया को ढूॅढने उसके गॉव जात है तब हिदिया आदिवासी काफिले के साथ बर्चे, खॉडा और फरसे हवा में तनकर करीत आकर कहती है– ''आ गया आप वहॉ भी, कुत्ता का माफिक सूॅघते – सुघते मालूम नै है आपको क्या कर सकता ई लोग?''[50] इस कथन से विदित होता है कि हिदिया स्वयं पर हुए अत्याचार का बदला संघर्ष कर के लेना चाहती है। लेखक ने यहॉ आदिवासी नारी को सूचित किया है कि जुल्म की खिलाफत ही बहादुरी है।

निष्कर्षत : स्पष्ट है कि आदिवासी नारी अन्याय अत्याचार के खिलाफ प्रतिरोध करती हुई परिलक्षित होती है।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः कह सकते है कि संजीव ने अपने कथा– साहित्य द्वारा हर बार नई जमीन तालाश की है। अलग –अलग विषयों पर चुनौतीपूर्ण लिखा है। उनका कथा – साहित्य एक शोधार्थी की तहर परिश्रम से विषय में गहरे डूबकर लिखा हुआ है। अपने जिंदादिल व्यक्तित्व से मनुष्य के यथार्थ जीवन की समस्याओं को वे बड़े गहराई सें लिखते है, इसी कारण उनका लेखन पाठों के दिल – दिमाग को छूता है।

'धार' उपन्यास में झारखंड के संथाल परगना में कोयला खदान में काम करने वाले संथाल आदिवासी की व्यथा को व्यापक फलक पर परिभाषित किया है। उपन्यास के पूर्वार्ध में संथाल परगना में कायेला खदान में काम करने वाले आदिवासियों की व्यथा तथा माफियों, ठेकेदारों, धर्मगुरू (ओझा) और पुलिस द्वारा आदिवासियों के शोषण का यथार्थ अंकन हुआ है। उपन्यास के उत्तरार्ध में आदिवासियों की चेतना, अधिकार बोध और संघर्ष का चित्रण है। 'पॉव तले की दूब 'उपन्यास में झारखंड के मेझिया, बाघामुंडी गॉव के आदिवासियों के कंगाल जीवन का, अंधविश्वास, कुपोषण, डायन जैसी बर्बर कुप्रथा, विस्थापन का तथा महाजन, ठेकेदार, पुलिस द्वारा शोषण का यथार्थ अंकन हुआ है।

संजीव का पहला उपन्यास 'किसनगढ़ के अहेरी' में अवध गॉव किसनगढ़ के आजादी के बाद के सामंती रूप का, वर्ण विद्वेष, वर्ग वैषम्य का यथार्थ चित्रण किया है। सामंतियों के मिथ्या अहंकार का पर्दाफाश भी किया है।

'जंगल जहॉ शुरू होता है' उपन्ययास में बिहार और पश्चिमी चंपारण में लोकतंत्र और शासन के नाम पर पसरी हुई सामंती निरंकुशतला को तथा डाकू, भ्रष्ट पुलिस तथा नेताओं द्वारा थारू आदिवासियों पर किए वाले अत्याचार को बेबाकी से प्रस्तुत किया है। संजीव ने इस उपन्यास में स्पष्ट किया है कि डाकू से भी खतरनाक पुलिस है। 'सूत्रधार' उपन्यास में भोजपूरी के मशहूर लोकनर्तक

भिखारी ठाकूर की जीवनी तथा सामाजिक विसंगितयॉ, वर्ण – व्यवस्था, ऊॅच –नीच आदि अमानवीय भेदों को सूक्ष्मता से रेखांकित किया हैं।

'सर्कस' उपन्यास में सर्कस में काम करते वालों का बहुविध शोषण, आर्थिक, शारीरिक और भावात्मक को यथार्थता से व्याख्यायित किया है। 'सर्कस' में का करने वाले बौनों, हिजड़ों की दर्दनाक दास्तान को संजीव ने रेखांकित किया है। 'सावधान! नीचे आग है' उपन्यास में कोयला खदान में काम करने वाले मजदूरों की जिंदगी, भ्रष्ट व्यवस्था द्वारा होने वाला शोषण तथा खदान दुर्घटना से मौत से खेलती हुई दर्दनाक स्थिति को अभिव्यक्ति प्रदान की है। खदान दुर्घटना में मरने वाले मज़दूरों के परिजनों के साथ मैनेजमेंट तथा भ्रष्ट सरकारी अफसरों की अमानवीयता का यथार्थवादी चित्रण मिलता है।

संदर्भ

1) किसनगढ के अहेरी – संजीव

2) पॉव तले की दूब– संजीव

3) 'सावधान! नीचे आग है' – संजीव

4) 'जंगल जहॉ शुरू होता है– संजीव

5) सर्कस – संजीव

6) 'धार – संजीव

7) कथाकार संजीव – गिरीश काशिद

8) सामाजिक यथार्थ और कथाकार संजीव – डॉ. शहाजहान मणेर

8) संत्र रामचन्द्र वर्मा – मानक हिंदी कोश पृष्ठ 435

9) संत्र श्री नवल जी – नालन्दा विशाल शब्दसागर, पृष्ठ 1135

10) अनूप शुक्ल – आकांक्ष और यथार्थ, पृष्ठ 33

11) डॉ. त्रिभूजन सिंह – हिंदी उपन्यास और यथार्थवाद पृष्ठ 44

12) संजीव – धार, पृष्ठ 104

13) संजीव – जंगल जहॉ शुरू होता है, पृष्ठ 22

उपसंहार

संजीव ने अपने कथा – साहित्य द्वारा हर बार नई जमीन तलाश कौ है। अलग– अलग विषयों पर चुनौतीपूर्ण लिखा है। उनका कथा – साहित्य एक शोधार्थी की तरह परिश्रम से विषय में गहरे डूबकर लिख हुआ है। अपने जिंदादिल व्यक्तित्व से मनुष्य के यथार्थ जीवन की समस्याओं को वे बड़े गहराई से लिखत है, इसी कारण उसनका लेखन पाठकों के दिल – दिमाग को छूता है।

संजीव का पहला उपन्यास 'किसनगढ़ के अहेरी' में अवध गॉव किसनगढ़ के आजादी के बाद के सांमती रूप का, वर्ण विद्वेष, वर्ग वैषम्य का यथार्थ चित्रण किया है। सामंतियों के मिथ्या अहंकार का पर्दापफाश भी किया है। 'सर्कस' उपन्यास में सर्कस में काम करने वालों का बहुविध शोषण, आर्थिक, शारीरिक और भावात्मक को यथार्थता से व्याख्यायित किया है। 'सर्कस' में काम करने वाले बौनों, हिजड़ों की दर्दनाक दास्तान को संजीव ने रेखांकित किया है। ' सावधान ! नीचे आग है' उपन्यास में कोयला खदान में काम करने वाले मजदूरों की जिंदगी, भ्रष्ट व्यवस्था द्वारा होने वाला शोषण तथा खदान दुर्घटना से मौत से खेलती हुई दर्दनाक स्थिति को अभिव्यक्ति प्रदान की है। खदान दुर्घटना में मरने वाले मजदूरों के परिजनों के साथ मैनेजमेंट तथा भ्रष्ट सरकारी अफसरों की अमानवीयता का यथार्थवादी चित्रण मिलता है।

'धार' उपन्यास में झारखंड के संथाल परगना में कोयला खदान में काम करने वाले संथाल आदिवासी की व्यथा को व्यापक फलक पर परिभाषित किया है। उपन्यास के पूर्वार्ध में संथाल परगना में कोयला खदान में कार करने वाले आदिवासियों की व्यथा तथा कोयला माफियों, ठेकेदारों, धर्मगुरू (ओझा) और पुलिस द्वारा आदिवासियों के शोषण का यथार्थ अंकन हुआ है। उपन्यास के उत्तरार्ध में आदिवासियों की चेतना, अधिकार बोध और संघर्ष का चित्रण है। 'पॉव तले की टूब' उपन्यास में झारखंड के मेझिया, बाघामुंडी गॉव के आदिवासियों के कंगाल जीवन का, अंधविश्वास, कुपोषण, डायन जैसी बर्बर कुप्रथा, विस्थापन का तथा महाजन, ठेकेदार, पुलिस द्वारा शोषण का यथार्थ अंकन हुआ है।

'जंगल जहॉ शुरू होता है' उपन्यास में बिहार और पश्चिमी चंपारण में लोकतंत्र और शासन के नाम पर पसरी हुई सामंती निरंकुशता, डाकू, भ्रष्ट पुलिस तथा नेताओं द्वारा थारू आदिवासियों पर किए जाने वाले अत्याचार को बेबाकी से प्रस्तुत किया है। संजीव ने इस उपन्यास में स्पष्ट किया है कि डाकू से भी खतरनाक पुलिस है। 'सूत्रधार' उपन्यास में भोजपूरी के मशहूर के मशहूर लोकनर्तक भिखारी ठाकूर की जीवनी तथा सामाजिक विसंगितायॉ, वर्ण – व्यवस्था, ऊॅच –नीच आदि अमनवीय भेदों को सूक्ष्मता से रेखांकित किया हैं।

मनाना, टोना – टोटका, पूजा–अर्चा, रूढि परंपरा का प्रचलन दृश्टिगोचर होता है। उच्चवर्गीय समाज के रहन –सहन का, पारिवारिक एवं सांस्कृतिक स्थिति का चित्रण बहुत कम मात्रा में मिलता है।

विवेच्य उपन्यासों की भाषा स्थानीय रंगत के बावजूद सरल एवं प्रवाहमयी है। संजीव ने भाषा में अनेक नए किंतू सार्थक प्रयोग किए है। भाषा पात्र, स्थिति, कथ्य, काल, विषय एवं भवों के अनुरूप है। विवेच्य उपन्यासों में भोजपूरी, अवधी, बंगली, संथाल बोली, थारू एवं भोजपूरी का मिश्रीत रूप में प्रयोग हुआ है। शिल्पगत प्रयोगधर्मित विवेच्य उपन्यासों में दिखाइ देती है। शब्दों में तद्भव, तत्सम, द्विरूक्त, ध्वन्यार्थक तथा कुछ नए रचित शब्द मिलते है।

विवेच्य उपन्यासों की भाषा में विशेषण, उपमान,शब्द–शक्तियॉ, मुहावरे, कहावतें तथा सूचिक्तॉ आदि समस्त भाषिक उपकरणों का यथाचित्र रूप में प्रयोग हुआ है। नई उपमाऍ नितांत अलग है। उक्तियॉ मार्मिक है। विवेच्या मार्मिक है। विवेच्य उपन्यासों में वस्तुशिल्प मानव जीवन को व्याख्यायित करने एवं उसे विविध पथों को मूल्यांकित करने में सक्षम जात पड़ता है। कथ्य मौलिक, सरत तथा कलात्मक लगता है। उनके पात्र अन्याय के खिलाफ संघर्ष करने के लिए संगठित होते है। वर्ण और वर्ग विद्वेष का शंख फूंके है। विवेच्य उपन्यासों में संवाद जीवित, सरल, संक्षिप्त तथा अर्थपूर्ण लगते है। उपन्यासों के चित्रित घटनाऑ, पात्रों और उनके परस्पर कार्य ' कलापों में स्वाभाविकता तथा विश्वसनीयता लागे के लिए देशकाल – वातावरण उचित लगता है। विवेच्य उपन्यासों में विविध शैलियों का

प्रयोग हुआ है। शिल्प और शैली उनके साहित्य सौष्ठव को ऊँचाई प्रदान करने वाले परिलक्षित होते है।